❁ तीसरा अध्याय ❁

।। दिव्य सारांश।।

गीता अध्याय 3 के श्लोक 1-2 में अर्जुन ने पूछा है कि हे जनार्दन! यदि आप कर्मों से बुद्धि (ज्ञान) को श्रेष्ठ मानते हो तो मुझे गुम राह किस लिए कर रहो हो? आप ठीक से सलाह दें जिससे मेरा कल्याण हो। आपकी बातों में विरोधाभास लग रहा है। आपकी ये दोतरफा (दोगली) बातें मुझे भ्रम में डाल रही हैं।

।। शास्त्र विधि रहित पूजा अर्थात् मनमाना आचरण का विवरण।।

गीता अध्याय 3 के श्लोक 3 से 8 में भगवान ने कहा है कि हे निष्पाप! (अर्जुन) इस लोक में ज्ञानी तो ज्ञान को श्रेष्ठ मानते हैं तथा योगी कर्म योग को फिर भी ऐसा कोई नहीं है जो कर्म किए बिना बचे। निष्कर्मता नहीं बन सकती और कर्म त्यागने मात्र से भी उद्देश्य प्राप्त नहीं हो सकता। अध्याय 3 श्लोक 4 में निष्कर्मता का भावार्थ है कि जैसे किसी व्यक्ति ने एक एकड़ गेहूँ की पक्की हुई फसल काटनी है तो उसे काटना प्रारम्भ करके ही फसल काटने वाला कार्य पूरा किया जाएगा तब कार्य शेष नहीं रहेगा इस प्रकार कार्य पूरा होने से ही निष्कर्मता प्राप्त होती है। ठीक इसी प्रकार शास्त्र विधि अनुसार भक्ति कर्म प्रारम्भ करने से ही परमात्मा प्राप्ति रूपी कार्य पूरा होगा। फिर निष्कर्मता बनेगी। कोई कार्य शेष नहीं रहेगा। यदि भक्ति कर्म नहीं करेगें तो यह त्रिगुण माया (रजगुण ब्रह्मा, सतगुण विष्णु तथा तमगुण शिव) बलपूर्वक अन्य व्यर्थ के कार्यों में लगाएगी। चूंकि स्वभाव वश माया (प्रकति) से उत्पन्न तीनों गुण (रज-ब्रह्मा, सत-विष्णु, तम-शिव) जीव से जबरदस्ती कर्म करवाते हैं। जैसे जूआ खेलना, शराब आदि नशीली वस्तुओं का सेवन करना, चोरी-लूट, व्याभीचार करना, अधिक धन उपार्जन के अर्थ पाप करना जैसे मिलावट-धोखाधड़ी आदि कर्म जीव तीनों देवताओं से निकल रहे गुणों के प्रभाव से करता है। जब तक मानव (स्त्री-पुरूष) पूर्ण गुरू धारण नहीं करता, तब तक वह ऐसा होता है जैसे बिना खेवटिया (मल्लाह) की नौका जो हवा के झोंकों तथा पानी की लहरों व दरिया के बहाव से प्रभावित होकर इधर-उधर जाती है। भंवर में फँसकर नष्ट हो जाती है। पूर्ण सतगुरू की शरण में जब मानव (स्त्री-पुरूष) आ जाता है तो वह मल्लाह वाली नौका बन जाता है। सतगुरू रूपी मल्लाह जीव रूपी नौका को संसार सागर में इधर-उधर बहने (भटकने) नहीं देता। अपनी कुशलता से चलाकर दरिया के उस पार सकुशल पहुँचा देता है। जिनको पूर्ण गुरू नहीं मिला। वे जो मनमुखी भक्तजन (साधक) कर्म इन्द्रियों को हठ पूर्वक रोक कर एक स्थान पर भजन पर बैठते हैं तो उनका मन ज्ञान इन्द्रियों के प्रभाव से प्रभावी रहता है। वे लोग दिखावा आडम्बर वश समाधिस्थ दिखाई देते हैं। वे पाखण्डी हैं अर्थात् कर्म त्याग से भजन नहीं बनता। करने योग्य कर्म करता रहे तथा ज्ञान से मन व इन्द्रियों को अच्छे कर्मों में संलग्न रखे। शास्त्रों में वर्णित विधि से करने योग्य कर्म करना श्रेष्ठ है यदि सांसारिक कर्म नहीं करेगा तो तेरा निर्वाह (परिवार पोषण) कैसे होगा?

❖ *अध्याय 3 के श्लोक 9 में कहा है कि निष्काम भाव से शास्त्र अनुकूल किये हुए धार्मिक कर्म (यज्ञ) लाभदायक हैं। यज्ञ यानि धार्मिक अनुष्ठान जैसे पाँचों यज्ञ तथा नाम जाप करने के अतिरिक्त जूआ खेलना, शराब, तम्बाकू, माँस सेवन करना, फिल्म देखना, निंदा करना,*

व्याभीचार करना आदि-आदि कर्मों को करने वाला व्यक्ति कर्मों में बँधता है। इसलिए परमात्मा के निमित शास्त्र वर्णित कर्तव्य कर्म कर।

विशेष :- उपरोक्त गीता अध्याय 3 श्लोक 6 से 9 तक एक स्थान पर एकान्त में विशेष आसन पर बैठ कर कान-आँखें आदि बंद करके हठयोग करने की मनाही की है तथा शास्त्रों में वर्णित भक्ति विधि अनुसार साधना करना श्रेयकर बताया है। प्रत्येक सद्ग्रन्थों में सांसारिक कार्य करते-करते नाम जाप व यज्ञादि करने का भक्ति विधान बताया है।

प्रमाण :- पवित्र गीता अध्याय 8 श्लोक 13 में कहा है कि मुझ ब्रह्म का उच्चारण करके सुमरण करने का केवल एक मात्र ओं (ॐ) अक्षर है जो इसका जाप अन्तिम श्वांस तक कर्म करते-करते भी करता है वह मेरे वाली परमगति को प्राप्त होता है।

❖ *अध्याय 8 श्लोक 7 में कहा है कि हर समय मेरा स्मरण भी कर तथा युद्ध भी कर। इस प्रकार मेरे आदेश का पालन करते हुए अर्थात् सांसारिक कर्म करते-करते साधना करता हुआ मुझे ही प्राप्त होगा। भले ही अपनी परमगति को गीता अध्याय 7 श्लोक 18 में अति अश्रेष्ठ अर्थात् अति व्यर्थ बताया है, परंतु ब्रह्म साधना की विधि यही है।*

❖ *फिर अध्याय 8 श्लोक 8 से 10 तक में गीता ज्ञान दाता ने कहा है कि जो गीता अध्याय 8 श्लोक 3 में परम अक्षर ब्रह्म कहा है, उस परमात्मा अर्थात् पूर्णब्रह्म की भक्ति करो, जिसका विवरण गीता अध्याय 8 श्लोक 8-10 में तथा अध्याय 18 श्लोक 62 व अध्याय 15 श्लोक 1 व 4 तथा 17 में दिया है। उसका भी यही विधान है कि जो साधक पूर्ण परमात्मा की साधना तत्वदर्शी संत से उपदेश प्राप्त करके नाम जाप करता हुआ तथा सांसारिक कार्य करता हुआ शरीर त्याग कर जाता है वह उस परम दिव्य पुरुष अर्थात् पूर्ण परमात्मा को ही प्राप्त होता है। तत्वदर्शी संत का संकेत गीता अध्याय 4 श्लोक 34 में दिया है। तत्वदर्शी सन्त की पहचान गीता अध्याय 15 श्लोक 1 में है यही प्रमाण पवित्र यजुर्वेद अध्याय 40 मंत्र 10 तथा 13 में दिया है।*

यजुर्वेद अध्याय 40 मंत्र 10 का भावार्थ :-

पवित्र वेदों को बोलने वाले ब्रह्म ने कहा कि पूर्ण परमात्मा के विषय में कोई तो कहता है कि वह अवतार रूप में उत्पन्न होता है अर्थात् आकार में कहा जाता है, कोई उसे कभी अवतार रूप में आकार में उत्पन्न न होने वाला अर्थात् निराकार कहता है। उस पूर्ण परमात्मा का तत्वज्ञान तो धीराणाम् अर्थात् तत्वदर्शी संत ही बताऐंगे कि वास्तव में पूर्ण परमात्मा का शरीर कैसा है? वह कैसे प्रकट होता है? पूर्ण परमात्मा की पूरी जानकारी धीराणाम् अर्थात् तत्वदर्शी संतों से सुनों। मैं वेद ज्ञान देने वाला ब्रह्म भी नहीं जानता। फिर भी अपनी भक्ति विधि को बताते हुए अध्याय 40 मंत्र 15 में कहा है कि मेरी साधना ओ३म् (ॐ) नाम का जाप कार्य करते-करते कर, विशेष आस्था के साथ सुमरण कर तथा मनुष्य जीवन का मुख्य कर्त्तव्य जान कर सुमरण कर, इससे मत्यु उपरान्त अर्थात् शरीर छूटने पर मेरे वाला अमरत्व अर्थात् परमगति को प्राप्त हो जाएगा। जैसे सूक्ष्म शरीर में कुछ शक्ति आ जाती है, कुछ समय तक अमर हो जाता है। जिस कारण स्वर्ग या महास्वर्ग यानि ब्रह्मलोक में चला जाता है। पुनः जन्म-मत्यु को प्राप्त हो जाता है।

।। यज्ञों का लाभ केवल सांसारिक सुविधाएँ, मुक्ति नहीं।।

अध्याय 3 के श्लोक 10 में कहा है कि प्रजापति ने कल्प के प्रारम्भ में कहा था कि सब प्रजा यज्ञ करें। इससे तुम्हें सांसारिक भोग प्राप्त होंगे, न कि मुक्ति। इसका जीवित प्रमाण है कि यज्ञों से

सांसारिक भोगों व स्वर्ग प्राप्ति के अतिरिक्त कुछ नहीं। {यज्ञ भी आवश्यक हैं जैसे गेहूँ का बीज जमीन में बीजने के पश्चात् उसको सिंचाई के लिए जल तथा पोषण के लिए खाद की आवश्यकता होती है। इसी प्रकार परमात्मा की भक्ति के लिए नाम मंत्र रूपी बीज आत्मा में डालने के पश्चात् उसमें यज्ञों (पाँचों यज्ञों = धर्म यज्ञ, हवन यज्ञ, ध्यान यज्ञ, प्रणाम यज्ञ, ज्ञान यज्ञ) रूपी जल व खाद की आवश्यकता होती है। परंतु पूर्ण गुरु से नाम ले कर गुरु मर्यादा में रहते हुए अंतिम समय तक अनन्य मन से नाम जाप (अभ्यास योग) करता रहे वह साधक अंत में अपने इष्ट लोक में चला जाता है तथा जब तक संसार में रहता है, उसको यज्ञों के फल रूप में संसारिक सुविधाऐं भी अधिक मिलती रहती हैं। वही यज्ञों में प्रतिष्ठित इष्ट (पूर्ण परमात्मा) ही मन इच्छित यज्ञों का फल देता है। प्रमाण के लिए गीता जी के अध्याय 3 के श्लोक 14-15 में देखें। अध्याय 3 के श्लोक 11 में कहा है कि देवता यज्ञ से उन्नत होकर आप को उन्नत करें अर्थात् धनवान बनाएगें। इस प्रकार एक दूसरे का सहयोग रखो।

अध्याय 3 का श्लोक 10

सहयज्ञाः, प्रजाः, सृष्टा, पुरा, उवाच, प्रजापतिः,
अनेन, प्रसविष्यध्वम्, एषः, वः, अस्तु, इष्टकामधुक् ।।10।।

अनुवाद : (प्रजापतिः) प्रजापति यानि कुल के मालिक ने (पुरा) कल्पके आदिमें (सहयज्ञाः) यज्ञसहित (प्रजाः) प्रजाओंको (सृष्टा) रचकर उनसे (उवाच) कहा कि (अनेन) अन्न द्वारा होने वाला धार्मिक कर्म जिसे धर्म यज्ञ कहते हैं, जिसमें भोजन–भण्डारे यानि लंगर करना है, इस यज्ञ के द्वारा (प्रसविष्यध्वम्) वृद्धि को प्राप्त होओ और (वः) तुम साधकों को (एषः) यह पूर्ण परमात्मा (इष्टकामधुक्) यज्ञ में प्रतिष्ठित इष्ट ही इच्छित भोग प्रदान करनेवाला (अस्तु) हो।(3/10)

भावार्थ :- पूर्ण परमात्मा ने कल्प के प्रारम्भ में यज्ञों यानि धार्मिक अनुष्ठानों का ज्ञान तथा प्रजा को उत्पन्न करके उनसे कहा था कि अन्न द्वारा होने वाले धार्मिक कर्म जिसे धर्म यज्ञ कहते हैं जिसमें भोजन-भण्डारा यानि लंगर करना। इस यज्ञ के द्वारा बुद्धि को प्राप्त होओ यानि धर्म करने से धन प्राप्त होता है। तुम साधकों को यज्ञ में पूज्य इष्ट देव ही मनवांछित भोग प्रदान करे। यानि धन चाहिए तो दान धर्म कर, मुक्ति चाहिए तो ''भज सतनाम'' वाले सिद्धांत अनुसार पूर्ण परमात्मा साधक को लाभ देता है, उसे प्राप्त करो।(3/10)

अध्याय 3 का श्लोक 11

देवान्, भावयत, अनेन, ते, देवाः, भावयन्तु, वः,
परस्परम् भावयन्तः, श्रेयः, परम्, अवाप्स्यथ ।।11।।

हिन्दी अनुवाद :- यज्ञ के द्वारा देवताओं अर्थात् संसार रूपी पौधे की शाखाओं को उन्नत करो और वे देवता अर्थात् शाखाऐं तुम लोगों को उन्नत करें यानि पौधा पेड़ बनेगा। शाखाऐं फल देंगी। इस प्रकार एक दूसरे को उन्नत करके परम कल्याण को प्राप्त हो जाओगे।(3/11)

नोट :- इस ज्ञान को समझने के लिए कृपा देखें इसी पुस्तक के पृष्ठ 42 पर संसार रूपी पौधे का चित्र। चित्रों के द्वारा गीता अध्याय 3 के श्लोक 10-15 तक को समझना सरल हो जाएगा।

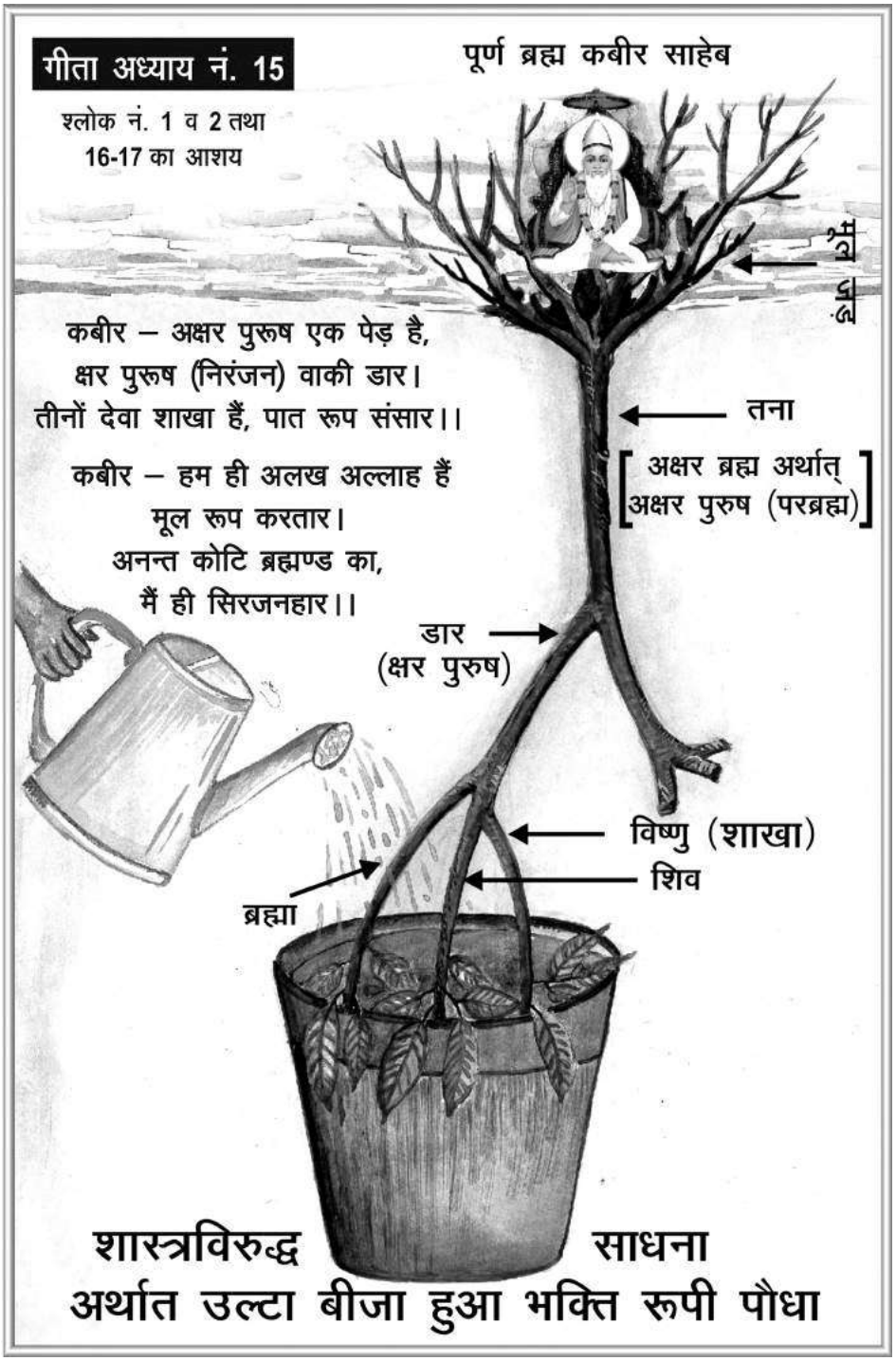
गीता अध्याय नं. 15
श्लोक नं. 1 व 2 तथा
16-17 का आशय
पूर्ण ब्रह्म कबीर साहेब
मूल
कबीर – अक्षर पुरूष एक पेड़ है,
क्षर पुरूष (निरंजन) वाकी डार।
तीनों देवा शाखा हैं, पात रूप संसार।।
तना
[अक्षर ब्रह्म अर्थात्
अक्षर पुरुष (परब्रह्म)]
कबीर – हम ही अलख अल्लाह हैं
मूल रूप करतार।
अनन्त कोटि ब्रह्मण्ड का,
मैं ही सिरजनहार।।
डार
(क्षर पुरुष)
विष्णु (शाखा)
शिव
ब्रह्मा
शास्त्रविरुद्ध साधना
अर्थात उल्टा बीजा हुआ भक्ति रूपी पौधा

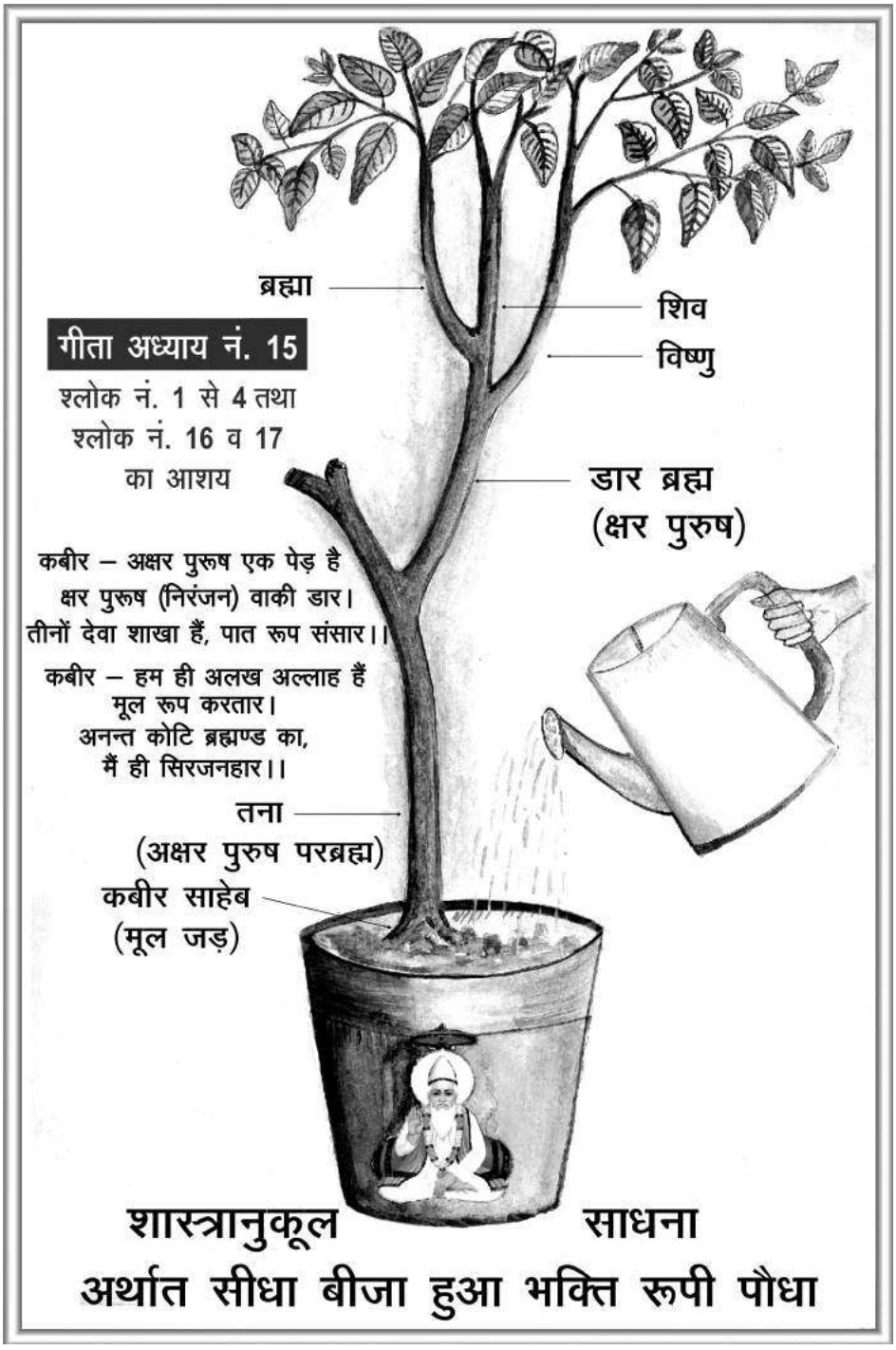
ब्रह्मा
शिव
विष्णु
गीता अध्याय नं. 15
श्लोक नं. 1 से 4 तथा
श्लोक नं. 16 व 17
का आशय
डार ब्रह्म
(क्षर पुरुष)
कबीर – अक्षर पुरूष एक पेड़ है
क्षर पुरूष (निरंजन) वाकी डार।
तीनों देवा शाखा हैं, पात रूप संसार।।
कबीर – हम ही अलख अल्लाह हैं
मूल रूप करतार।
अनन्त कोटि ब्रह्मण्ड का,
मैं ही सिरजनहार।।
तना
(अक्षर पुरुष परब्रह्म)
कबीर साहेब
(मूल जड़)
शास्त्रानुकूल साधना
अर्थात सीधा बीजा हुआ भक्ति रूपी पौधा

विशेष :- गीता अध्याय 15 श्लोक 1 से 4 में वर्णित उल्टा लटका हुआ संसार रूपी वक्ष है, उस की जड़ (मूल) तो पूर्ण परमात्मा है तथा तना परब्रह्म अर्थात् अक्षर पुरुष है तथा डार क्षर पुरुष (ब्रह्म) है व तीनों गुण अर्थात् रजगुण ब्रह्मा जी, सतगुण विष्णु जी, तमगुण शिव जी रूपी शाखायें हैं। वक्ष को मूल(जड़) से ही खुराक अर्थात् आहार प्राप्त होता है। जैसे हम आम का पौधा लगायेंगे तो मूल को सीचेंगे, जड़ से खुराक तना में जायेगी, तना से मोटी डार में, डार से शाखाओं में जायेगी, फिर उन शाखाओं को फल लगेंगे, फिर वह टहनियां अपने आप फल देंगी। इसी प्रकार पूर्णब्रह्म अर्थात् परम अक्षर ब्रह्म रूपी मूल की पूजा अर्थात् सिंचाई करने से अक्षर पुरुष अर्थात् परब्रह्म रूपी तना में संस्कार अर्थात् खुराक जायेगी, फिर अक्षर पुरुष से क्षर पुरुष अर्थात् ब्रह्म रूपी डार में संस्कार अर्थात् खुराक जायेगी। फिर ब्रह्म से तीनों गुण अर्थात् श्री ब्रह्मा जी, श्री विष्णु जी, श्री शिव जी रूपी तीनों शाखाओं में संस्कार अर्थात् खुराक जायेगी। फिर इन तीनों देवताओं रूपी टहनियों को फल लगेंगे अर्थात् फिर तीनों प्रभु श्री ब्रह्मा जी, श्री विष्णु जी, श्री शिव जी हमें संस्कार आधार पर ही कर्म फल देते हैं। यही प्रमाण गीता अध्याय 15 श्लोक 16 व 17 में भी है कि दो प्रभु इस पथ्वी लोक में हैं, एक क्षर पुरुष अर्थात् ब्रह्म, दूसरा अक्षर पुरुष अर्थात् परब्रह्म। ये दोनों प्रभु तथा इनके लोक में सर्व प्राणी तो नाशवान हैं, वास्तव में अविनाशी तथा तीनों लोकों में प्रवेश करके सर्व का धारण-पोषण करने वाला परमेश्वर परमात्मा तो उपरोक्त दोनों भगवानों से भिन्न है।

।। जो धर्म नहीं करते वे चोर व पापी प्राणी हैं।।

गीता अध्याय 3 के श्लोक 12 का हिन्दी अनुवाद :- यज्ञ यानि धार्मिक अनुष्ठानों के द्वारा बढ़ाए हुए देवता तुम साधकों को इच्छित भोग यानि सुख पदार्थ बिना माँगे निश्चय ही देते रहेंगे। भावार्थ है कि भक्ति रूपी पौधे के मूल की सिंचाई करके पेड़ बना लेते हैं। शाखाऐं बढ़ जाती हैं। उन शाखाओं को अपने-आप फल लगते हैं। बिना माँगे ही सेवक को फल देते हैं। इस प्रकार पूर्ण परमात्मा रूपी मूल यानि जड़ की ईष्ट रूप में प्रतिष्ठित करके पूजा करने वाले के शास्त्र अनुकूल भक्ति कर्मों का फल तीनों देवता (श्री ब्रह्मा, श्री विष्णु तथा श्री शिव) ही बिना माँगे देते रहते हैं। जो धन कर्मानुसार मानव को मिला है, यदि उसमें से दान-धर्म नहीं करते यानि देवताओं को नहीं बढ़ाते यानि मूल मालिक को ईष्ट देव रूप में प्रतिष्ठित करके दान नहीं देते, अपितु स्वयं ही भोगते हैं। वह तो परमात्मा का चोर है।(3/12)

गीता अध्याय 3 श्लोक 13 का अनुवाद :- जैसे गीता अध्याय 3 के श्लोक 12 में कहा है कि यज्ञ (शास्त्रविधि से किए धार्मिक अनुष्ठान) से पुष्ट(इष्ट) देवता आपको सांसारिक सुविधा कर्मफल के आधार पर देते हैं। फिर जो उसका कुछ अंश धर्म में नहीं लगाते अर्थात् जो धर्म यज्ञ आदि नहीं करते वे (संविधान तोड़े हुए हैं) पापी हैं, चोर हैं। गीता अध्याय 3 के श्लोक 13 में वर्णन है कि यज्ञ में प्रतिष्ठित (पूर्ण परमात्मा) इष्टदेव को भोग लगाकर फिर भण्डारा करें। वे साधक यज्ञ के द्वारा होने वाले लाभ को प्राप्त हो जाएंगे। [सर्व पापों से मुक्त होने का अभिप्राय यह है कि जो यज्ञ नहीं करते वे पापी कहे हैं और जो शास्त्र विधि के अनुसार (मतानुसार) यज्ञ करते हैं वे उन सर्व पापों से बच जाते हैं जो यज्ञ न करने से लगने थे] यदि कोई यज्ञ आदि धार्मिक अनुष्ठान नहीं करता, वह तो चोर बताया है। प्रतिदिन या सत्संग के समय भोजन प्रसाद बनता है। सर्व प्रथम कुछ भोजन अलग निकाल कर पूर्ण परमात्मा को भोग लगाया जाना चाहिए। उसके पश्चात् शेष भोजन भण्डारा वितरित किया जाना चाहिए। प्रभु के भोग से बचा शेष भोजन व प्रसाद खाने वाले के कुछ पाप

विनाश हो जाते हैं। इस प्रकार पूर्ण संत से उपदेश प्राप्त करके उसके बताए अनुसार सर्व भक्ति कार्य करने से साधक पूर्ण मुक्त हो जाता है।

''काल ब्रह्म का उत्पत्तिकर्ता तथा यज्ञों में प्रतिष्ठित पूर्ण परमात्मा है''

गीता अध्याय 3 के श्लोक 14-19 का हिन्दी अनुवाद :-

❖ *प्राणी अन्न से उत्पन्न होते हैं। अन्न वर्षा से उत्पन्न होता है। वृष्टि यज्ञ से यानि धार्मिक अनुष्ठान से होती है। यज्ञ यानि धार्मिक अनुष्ठान शास्त्र अनुकूल कर्मों से सफल होते हैं।(3/14)*

❖ *कर्मों को तू ब्रह्म यानि काल ब्रह्म से उत्पन्न जान क्योंकि जीव सतलोक को त्यागकर काल लोक में आए तो कर्म करके सर्व पदार्थ प्राप्त करते हैं। सतलोक में बिना कर्म किए सर्व पदार्थ प्राप्त होते हैं। वहाँ नैष्कर्मय मुक्ति जीव को प्राप्त होती है। इस श्लोक में आगे कहा है कि ब्रह्म यानि काल ब्रह्म की उत्पत्ति अविनाशी परमात्मा यानि परम अक्षर पुरूष से हुई है, ऐसा जान। इससे सिद्ध होता है कि (''सर्वगतम् ब्रह्म'') सर्वव्यापी परम अक्षर ब्रह्म सदा ही यज्ञों यानि धार्मिक अनुष्ठानों में प्रतिष्ठित है, ईष्ट रूप में पूज्य है।(3/15)*

❖ *हे पथ्यु पुत्र यानि पार्थ! जो व्यक्ति इस काल ब्रह्म के लोक में इस प्रकार प्रचलित विधान चक्र के अनुकूल नहीं बरतता यानि शास्त्रों में दिए व्याख्यान के अनुसार भक्ति कर्म नहीं करता, वह इन्द्रियों के भोगों में रमण करने वाला पापायु यानि जीवनभर पाप करने वाला व्यक्ति व्यर्थ ही जीवित रहता है।(3/16)*

❖ *परंतु जो मानव आत्मा यानि सच्चे मन से परमात्मा के विद्यान का पालन करता है और जो अपने शास्त्र अनुकूल कर्म से तृप्त है तथा जिसे अपनी आत्मा से किए शास्त्रानुकूल कर्म से संतुष्टि हो, उसके लिए अन्य पदार्थ की प्राप्ति के लिए कर्मों से कोई प्रयोजन नहीं रहता।(3/17)*

❖ *उस महापुरूष के लिए विश्व में न तो व्यर्थ के पाप कर्म करने से कोई प्रयोजन रह जाता है तथा न शास्त्रानुकूल धार्मिक कर्म न करने से कोई प्रयोजन रह जाता है यानि तत्वज्ञान परिचित व्यक्ति अशुभ कर्म कदापि नहीं करता तथा शुभ व शास्त्रोक्त साधना किए बिना भी नहीं रह सकता। वह केवल परमार्थ के कार्य ही करता है। किसी भी प्राणी से स्वार्थ सिद्धि के लिए ही सम्बन्ध नहीं रखता। वह सबका शुभचिंतक होता है।(3/18)*

❖ *इसलिए आप तथा अन्य साधक निरंतर आसक्ति रहित होकर सदा शास्त्रोक्त कर्तव्य कर्म को भली-भांति करते रहो क्योंकि काल लोक से आसक्ति हटाकर शास्त्रोक्त भक्ति कर्म करता हुआ साधक (परम् पुरूषः) गीता ज्ञान दाता से पर यानि दूसरे पुरूषः यानि परमात्मा को प्राप्त होता है।(3/19)*

विश्लेषण :- गीता अध्याय 3 के श्लोक 19 में मूल पाठ में लिखा है कि साधक शास्त्रोक्त साधना करके ''परम् आप्नोति पुरूषः'' अन्य परमात्मा को प्राप्त होता है। ''परम्'' का अर्थ अन्य गीता अनुवादकों ने ''परम्'' का अर्थ परमात्मा किया है। इन्हीं अनुवादकों ने इसी अध्याय 3 के श्लोक 42-43 में ''परम्'' का अर्थ ''पर'' किया है। ''पर'' का अर्थ ''श्रेष्ठ'' किया है। यदि हिन्दी की बात करें तो ''पर'' का अर्थ अन्य या आगे वाला (Next) होता है। जैसे दादा, फिर परदादा तथा ब्रह्म, फिर परब्रह्म यानि दूसरा ब्रह्म या अन्य ब्रह्म होता है। इन्हीं अनुवादकों ने गीता अध्याय 8 श्लोक 20 में ''परः'' का अर्थ परे किया है। अध्याय 8 के ही श्लोक 22 में ''परः'' का अर्थ ''परम'' किया है जबकि मूल पाठ से स्पष्ट है कि परः का अर्थ अन्य यानि दूसरा है, जैसे अध्याय 8 श्लोक

22 में परः का अर्थ अन्य, दूसरा सही है जो इस प्रकार है :-

पुरूषः सः परः पार्थ भक्त्या लभ्यः तु अनन्यया। यस्य अन्तः स्थानि भूतानि येन सर्वम् इदम् ततम्।।(8/22)

इस अध्याय 8 के श्लोक 22 का यथार्थ अनुवाद इस प्रकार है :- (पार्थ) हे पार्थ! (सः परः पुरूषः) वह मेरे से अन्य परमात्मा (तू) तो (अनन्या भक्तया लभ्यः) अनन्य भक्ति से प्राप्त होने योग्य है। जिस परमात्मा के आधीन सर्व प्राणी हैं और जिस सच्चिदानंद घन परमात्मा से यह सम्पूर्ण जगत परिपूर्ण है यानि जो सर्वगतम् यानि सर्वव्यापी परमात्मा है। वह गीता ज्ञान दाता से अन्य है।(8/22)

इन्हीं गीता के अनुवादकों ने गीता अध्याय 7 के श्लोक 13 में ''परम्'' का अर्थ परे किया है जो मूल पाठ व अनुवाद में इस प्रकार है :- (एभ्यः) इन तीनों गुणों से (परम्) परे (माम्) मुझ (अव्ययम्) अविनाशी को (न) नहीं (अभिजानाति) जानते तथा अध्याय 14 श्लोक 19 में भी ''परम्'' का अर्थ परे किया है। लेखक यह सिद्ध करना चाहता है कि मेरे अतिरिक्त विश्व में किसी को भी सम्पूर्ण आध्यात्मिक ज्ञान नहीं। जिस कारण से सबने अर्थों का अनर्थ करके गीता की गरिमा को गिराया है। श्री कष्ण उर्फ विष्णु को सर्व का मालिक परमात्मा बताया है जो स्पष्ट झूठ है। इसी कारण से जहाँ-जहाँ गीता में अस्पष्ट यानि सांकेतिक या संक्षिप्त में लिखा है कि पूर्ण परमात्मा गीता ज्ञान दाता से भिन्न है। वहाँ-वहाँ पर अनुवाद बिल्कुल गलत कर दिया। अर्थों का अनर्थ किया है। जिन श्लोकों में गीता ज्ञान देने वाले से अन्य पूर्ण परमात्मा का स्पष्ट वर्णन है, वहाँ अन्य अनुवादकर्ताओं ने स्पष्ट लिखना पड़ा, परंतु इनको पता नहीं वह कौन परमात्मा है?

जैसे गीता अध्याय 8 श्लोक 3, 8-10, 20, 21, 22 में, अध्याय 4 श्लोक 31-32 में, अध्याय 5 श्लोक 14-16, 19, 20, 24-26 , अध्याय 6 श्लोक 7, अध्याय 12 श्लोक 1-5, अध्याय 13 श्लोक 12-28, 30, 31, 34 में, अध्याय 18 श्लोक 46, 61, 62, 66 में गीता ज्ञान देने वाले से अन्य पूर्ण परमात्मा का वर्णन है।

❖ *उपरोक्त श्लोकों को आप इसी पुस्तक के उसी अध्याय के सारांश में पढ़ें जहाँ पर विस्तार से वर्णन है।*

उदाहरण के लिए गीता अध्याय 4 श्लोक 31 में अन्य परमात्मा का स्पष्ट वर्णन मूल पाठ में है तो अनुवादकों ने स्पष्ट लिखना पड़ा, परंतु श्लोक 32 में सांकेतिक वर्णन है। वहाँ अर्थ का अनर्थ करके गलत अनुवाद कर दिया। इसमें ''ब्रह्मणः'' शब्द का अर्थ वेद कर दिया जबकि इन्होंने ही गीता अध्याय 17 श्लोक 23 में ब्रह्मणः का अर्थ सच्चिदानंद घन ब्रह्म यानि पूर्ण ब्रह्म ठीक किया है। इसलिए अध्याय 4 श्लोक 32 में भी पूर्ण परमात्मा का वर्णन है। प्रसंग चल रहा है कि गीता अध्याय 3 के श्लोक 19 में ''परम् = पर'' का अर्थ अन्य अनुवादकों ने ''परम्'' यानि पर का अर्थ परमात्मा किया है तथा एस्कोन वालों ने ''परम्'' यानि पर का अर्थ परब्रह्म किया है। जिससे यह तो प्रमाणित होता है कि अनुवादक मानते हैं कि इस अध्याय 3 के श्लोक 19 में गीता ज्ञान दाता से अन्य (दूसरे) परमात्मा का वर्णन है। परब्रह्म का भी अर्थ अन्य यानि दूसरा ब्रह्म यानि अन्य परमात्मा बनता है, अनुवाद में गोलमाल करना चाहा है। परंतु सच्चाई छिपती नहीं है। मूल पाठ में ''परम् पुरूषः आप्नोति'' से स्पष्ट है कि गीता ज्ञान दाता से पर पुरूष यानि दूसरे परमात्मा को (आप्नोति) प्राप्त होता है। यह ठीक है। इस अध्याय 3 श्लोक 35 में ''पर धर्म'' का अर्थ दूसरे का धर्म इन्हीं अनुवादकों ने किया है। इसलिए यहाँ भी ''परम्'' का अर्थ दूसरा पुरूष यानि परमात्मा करना उचित है।

❖ *गीता अध्याय 3 के श्लोक 14-15 में कहा है कि सब प्राणी अन्न से उत्पन्न होते हैं। अन्न वर्षा से होता है, वर्षा यज्ञ से होती है, यज्ञ शुभ कर्मों से उत्पन्न होते हैं तथा कर्म, ब्रह्म (काल) द्वारा उत्पन्न हुए और ब्रह्म (काल) अविनाशी परमात्मा से उत्पन्न हुआ है। वही सर्वव्यापी अविनाशी परमात्मा सदा ही यज्ञों में प्रतिष्ठित है अर्थात् यज्ञों से होने वाला लाभ भी वही (सतपुरुष ही) देता है। इसलिए यज्ञों का भी पूर्ण लाभ पूर्ण परमात्मा से ही सिद्ध हुआ। इन दोनों श्लोकों में स्पष्ट है कि काल ब्रह्म की उत्पत्ति अविनाशी परमात्मा से हुई है। वही सर्वव्यापी परमात्मा ही यज्ञों द्वारा पूज्य है तथा वही फल देता है। 'सर्वगतम् ब्रह्म' का अर्थ है सर्वव्यापी भगवान यानि वासुदेव। जैसे काल ब्रह्म तो केवल इक्कीस ब्रह्मण्डों में व्यापक है। परब्रह्म केवल सात शंख ब्रह्मण्डों में व्यापक है। परंतु पूर्णब्रह्म (सतपुरुष) असंख ब्रह्मण्डों (सर्व ब्रह्मण्डों) जिसमें ब्रह्म व परब्रह्म के ब्रह्मण्ड और अन्य ब्रह्मण्ड भी शामिल हैं, में व्यापक है। इसलिए सर्वव्यापक परमात्मा ''पूर्ण ब्रह्म'' हुआ जो सर्वव्यापक भगवान और कुल मालिक है। जैसे :-*

❖ *ईश = क्षर पुरुष = ब्रह्म (इक्कीस ब्रह्मण्ड में व्यापक है।)*

❖ *ईश्वर = अक्षर पुरुष = परब्रह्म (सात शंख ब्रह्मण्ड में व्यापक है।)*

❖ *परमेश्वर = परम अक्षर पुरुष = पूर्णब्रह्म (सतपुरुष) जो अनन्त कोटि ब्रह्मण्डों में व्यापक है यानि सर्वव्यापक है।*

जैसे मन्त्री अपने विभाग में व्यापक है, मुख्य मन्त्री अपने राज्य (state) में व्यापक है और प्रधान मन्त्री पूरे देश (राष्ट्र) के सब राज्यों (states) में व्यापक है और राष्ट्रपति भी सर्व राष्ट्र में व्यापक है प्रत्येक प्रभु में शक्ति है परंतु कुल मालिक (पूर्ण शक्ति युक्त) प्रधान मन्त्री तथा राष्ट्रपति हैं। इसी प्रकार ब्रह्म (ईश/काल) के तीनों पुत्र (ब्रह्मा, विष्णु, शिव) प्रान्त अर्थात् एक ब्रह्मण्ड में विभागीय मन्त्री (स्वामी) हैं। ब्रह्मा सर्व जीवों को उत्पन्न करने वाले विभाग का मालिक है, परंतु सब का मालिक नहीं है। इसी प्रकार विष्णु स्थिती करने वाले विभाग में मालिक है, परंतु सब का मालिक नहीं है। इसी प्रकार शिव (संहार करने) विनाश करने के विभाग के मालिक हैं परंतु सब के मालिक नहीं हैं। इसी प्रकार ब्रह्म (ईश/ज्योतिनिरंजन/काल) केवल इक्कीस ब्रह्मण्ड के मालिक हैं, सब के मालिक नहीं हैं। इसी प्रकार अक्षर पुरुष (ईश्वर/परब्रह्म) केवल सात शंख ब्रह्मण्ड के मालिक हैं सर्व के मालिक नहीं हैं।

हाँ, पूर्णब्रह्म (परमेश्वर/सतपुरुष) अनंत करोड़ ब्रह्मण्डों जिसमें ब्रह्मा-विष्णु-शिव के तीनों (स्वर्ग-मत्यु-पाताल) लोक, ब्रह्म के इक्कीस ब्रह्मण्ड व परब्रह्म के सात शंख ब्रह्मण्ड भी शामिल हैं, का मालिक है अर्थात् कुल का मालिक सर्वव्यापक परमात्मा (सर्वगतम् ब्रह्म/ सतपुरुष) ही है जो सर्व साधनाओं का फल दाता है। जैसे वक्ष की जड़ें (मूल) ही पूर्ण वक्ष की पालन कर्त्ता हैं। ऐसे --

कबीर, अक्षर पुरुष एक पेड़ है, निरंजन वाकी डार। तीनों देवा साखा हैं, पात रूप संसार।।1।।
कबीर, एकै साधे सब सधै, सब साधे सब जाय। माली सीचैं मूल कूं, फूलै फलै अघाय।।2।।
कबीर, हम ही अलख अल्लाह हैं, मूल रूप करतार। अनंत कोटि ब्रह्मण्ड का, मैं ही संजनहार।।3।।

भावार्थ :- गीता अध्याय 15 श्लोक 1-4 में प्रमाण है, उसी का वर्णन परमेश्वर कबीर जी ने सम्पूर्ण तथा विस्तार से बताया है कि मैं (परम अक्षर पुरूष) तो संसार रूपी वक्ष का मूल हूँ। मैं ही सर्व ब्रह्मण्डों का रचने वाला हूँ। मूल होने से सर्व का पोषण करता हूँ तथा अक्षर पुरूष संसार वक्ष का तना जानो और क्षर पुरूष मोटी डारों में से एक डार जानो तथा तीनों देवताओं (ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव) को उस डार रूप क्षर पुरूष पर लगी तीन शाखा जानो। उन शाखाओं पर लगे पत्तों को

संसार के जीव-जंतु, मानव आदि प्राणी जानो। एक जड़ की सिंचाई करने से सर्व वक्ष फल-फूल जाता है। यदि शाखाओं को जमीन में रोपकर सिंचाई करेंगे तो पौधा नष्ट हो जाएगा। इसलिए एक पूर्ण परमात्मा को इष्ट रूप में पूजने से भक्ति रूपी पौधा फलता-फूलता है यानि सर्व लाभ मिलते हैं।

(गीता अध्याय 3 श्लोक 10-19 तक का भावार्थ जानने के लिए देखें भक्ति रूपी पौधे का चित्र इसी पुस्तक के पष्ठ 41-42 पर।)

गीता अध्याय 3 के श्लोक 16 में लिखा है कि जो यज्ञ नहीं करता वह व्यर्थ जीवन जी रहा है। जो व्यक्ति इस लोक में बने भक्ति नियमों (भजन करना, यज्ञ, दान, दया करना) का पालन नहीं करता, मौज मारता रहता है, वह पाप आत्मा संसार में व्यर्थ ही आया है।

संत गरीबदास जी महाराज कहते हैं कि :-

जिन पुत्र नहीं यज्ञ करी, पिंड प्रधान पराण। नाहक जग में अवतरे, जिनसे नीका श्वान।।

भावार्थ :- जिस पुत्र ने शास्त्रविधि अनुसार धार्मिक अनुष्ठान नहीं किए और शास्त्र विरूद्ध पिण्डदान, श्राद्ध आदि कर्मकाण्ड किए, उससे तो कुत्ता भी अच्छा यानि पिता की आत्मा धार्मिक पुत्र से प्रसन्न होती है। पिता या माता के जीवन काल में पुत्र को चाहिए कि गुरू जी की आज्ञा लेकर धर्म-कर्म करे। अन्यथा उस पुत्र से तो पशु भी अच्छा है।

[गुरू से दीक्षा लेकर नाम जाप न करके केवल यज्ञ करने से मुक्ति नहीं है बल्कि यह लेन-देन बताया। गीता जी के अध्याय 3 के श्लोक 9 से 16 तक का भावार्थ है कि यज्ञ करने से मात्र एक सांसारिक सुविधा उपलब्ध होती है, मुक्ति नहीं। परंतु यज्ञ मोक्ष में सहयोगी हैं। बिना नाम दीक्षा लिए की गई यज्ञ केवल संसारिक सुविधाऐं देती हैं। साथ में यह भी सिद्ध हुआ कि यह सर्व सुविधा भी पूर्णब्रह्म सतपुरुष (मूल=जड़ों) द्वारा दी जाती है जो स्वयं कबीर साहेब (कविर्देव) हैं।] मुझ दास (रामपाल दास) के अतिरिक्त श्रीमद्भगवद् गीता जी के सब अनुवादकर्ताओं ने भिन्न-भिन्न अध्यायों में ब्रह्म का अर्थ वेद तथा परमात्मा दोनों किया है। यह उनकी अल्पज्ञता का ही प्रमाण है, ब्रह्म का अर्थ परमात्मा होता है, वेद नहीं। जैसे एक तो राजा होता है, वह तो ब्रह्म जानों तथा एक उसके द्वारा बनाया गया संविधान होता है, वह वेद जानों। कोई अज्ञानी राजा का अर्थ नरेश न करके संविधान करे तो उचित नहीं। इसलिए ब्रह्म का अर्थ परमात्मा होता है। जैसे किसी उपायुक्त के कार्यालय के अन्य अधिकारी व कर्मचारी आपस में चर्चा करते समय बार-बार उपायुक्त साहेब न कह कर केवल साहेब ही प्रयोग करते हैं। उपायुक्त साहेब का कोई आदेश एक-दूसरे को सुनाते समय कहते हैं कि साहेब ने कहा है कि अमुक दस्तावेज तैयार करो। उनके लिए उपायुक्त साहेब स्वयं ही जाना माना होता है।

इसी प्रकार काल ब्रह्म (ज्योति निरंजन-काल) के इक्कीस ब्रह्मण्ड़ों में इसी क्षर पुरुष को साहेब अर्थात् ब्रह्म नाम से जाना जाता है। इसलिए उपरोक्त श्लोकों में जाना-माना होने के कारण लिखा है कि ब्रह्म की उत्पत्ति अविनाशी परमात्मा (सर्व व्यापक पूर्ण परमात्मा) से हुई है। वही सर्वगतम् ब्रह्म अर्थात् सर्वव्यापक परमात्मा ही यज्ञों में प्रतिष्ठित है यानि पूज्य है।

❖ *गीता अध्याय 3 के श्लोक 17-18 का भावार्थ है कि जो व्यक्ति आत्म-तत्व का ध्यान करता है उसे अन्य यज्ञों की भी आवश्यकता नहीं होती क्योंकि ध्यान भी एक यज्ञ है तथा ध्यान वही व्यक्ति अधिक करता है जो वानप्रस्थ हो जाता है जैसे श्रंगी ऋषि हुआ था। वह भी ध्यान में रहता था। फिर वह अन्य यज्ञ नहीं कर सकता। परंतु तत्वज्ञान हो जाने के पश्चात् साधक न तो शास्त्र विधि रहित साधना (मनमाना आचरण) करता है तथा न ही स्वार्थवश करवाता है। उसका उद्देश्य*

स्वार्थवश धन उपार्जन नहीं रहता। इसलिए कहा है कि कोई कार्य नहीं रहता अर्थात् निरंतर प्रभु चिन्तन में ही मग्न रहता है।

।। मनोकामना पूर्ति की इच्छा के बिना किया हुआ धर्म पूर्ण लाभदायक।।

गीता अध्याय 3 के श्लोक 20 में प्रमाण है कि -

बिन इच्छा जो देत है, सो दान कहावै। फल बाचैं नहीं तासका, सो अमरापुर जावै।

शब्दार्थ :- जो श्रद्धालु किसी मनोकामना की पूर्ति की इच्छा न रखकर अपना धार्मिक कर्तव्य जानकर दान करता है, वह वास्तविक दान है। ऐसा व्यक्ति पूर्ण गुरू से दीक्षा लेकर अमर लोक (शाशवत स्थान) में चला जाता है यानि मोक्ष प्राप्त करता है।

राजा जनक भी यज्ञ आदि करते थे परंतु इच्छा रूपी नहीं। मनुष्य का कर्तव्य समझ कर किया गया यज्ञ परमात्मा प्राप्ति में सहयोग देता है तथा यज्ञ का फल भी देता है।

।। कथनी और करनी में अंतर।।

(इन श्लोकों से भी स्पष्ट है कि गीता का ज्ञान काल ब्रह्म ने श्री कष्ण जी में प्रवेश करके बोला था।)

❖ *गीता अध्याय 3 के श्लोक 21 से 24 में कहा है कि हे अर्जुन! ज्ञानी साधु संतों को अच्छे कर्म शास्त्र अनुकूल करने चाहिए, चूंकि उन्हीं (संत जनों) का अनुसरण अन्य समाज भी करता है। जबकि मुझे तीन लोक में कोई कर्म करने की आवश्यकता नहीं क्योंकि तीन लोक की सर्व सुविधा मैं बिन कर्म किए भी प्राप्त कर सकता हूँ। फिर भी अच्छे कर्म करता हूँ ताकि अन्य प्राणी भी मेरा अनुसरण करें, नहीं तो मैं समाज का नाश करने वाला वर्णशंकरता को पैदा करने वाला साबित हो जाऊँ।*

विचार करें :- श्री कष्ण जी के चरित्र का अनुसरण करने से तो समाज में अराजकता, अश्लीलता का आलम हो जाएगा। जैसे कुंवारी राधा से रमण (काम क्रीड़ा), कुंवारी कुब्जा से भोग विलास, गोपियों के वस्त्र हरण करना तथा उनको जल से निःवस्त्र बाहर निकालना। गोपियों ने जल से बाहर आते समय एक हाथ से गुप्तांग को ढ़का हुआ था तथा दूसरे से अपनी छातियों को छुपा रखा था। फिर भी श्री कष्ण भगवान बोले कि ऐसे नहीं, दोनों हाथ ऊपर करो, तब कपड़े मिलेंगे। जब सब गोपियों ने दोनों हाथ ऊपर किए, उस समय वे बिल्कुल नग्न थी। तब भगवान कष्ण जी ने उनके कपड़े दिए। अधिक जानकारी के लिए पढ़ें ''श्री मद्भागवत सुधा सागर''।

❖ *रूकमणी को जबरदस्ती उठा कर भाग जाना और जब उसके भाई रूकमी ने अपनी बहन की इज्जत बचाने के लिए पीछा किया तो श्री कष्ण जी ने उसे रथ से बाँध कर घसीटा।*

❖ *अर्जुन को क्षत्री धर्म पालन न करने से होने वाली हानि जोर देकर समझाना तथा स्वयं कालयवन राजा के सामने युद्ध छोड़ कर भाग जाना, क्षत्रिय धर्म के विरुद्ध आचरण है।*

❖ *युधिष्ठिर से झूठ बुलवाना कि कह दे कि अश्वत्थामा (द्रोणाचार्य का पुत्र) मर गया आदि-2। कथनी और करनी में अंतर भी यह सिद्ध करता है कि भगवान कष्ण जी ने श्रीमद् भगवद् गीता नहीं कही। गीता ज्ञान कहने वाला गीता जी में कहता है कि यदि सोच समझ कर कर्म न करुं तो मैं वर्णशंकरता का कारण साबित होऊँ। फिर कथन से विरूद्ध आचरण। पवित्र श्रीमद् भगवद् गीता जी श्री कष्ण जी के शरीर में प्रविष्ट करके काल (ब्रह्म) भगवान ने अपना उल्लु सीधा (युद्ध करवा कर लाखों व्यक्तियों का संहार करवाना था) करने के लिए कही, क्योंकि काल (ब्रह्म) ने गीता*

अध्याय 11 श्लोक 48 में कहा है कि मैं किसी को किसी भी साधना से दर्शन नहीं दूंगा। परंतु सर्व कार्य मेरे द्वारा गुप्त शक्ति (निराकार शक्ति) से किए जाएंगे। गीता अध्याय 7 श्लोक 24-25 में भी स्पष्ट कहा है कि मैं अपनी योगमाया से छिपा रहता हूँ। यह मेरा अटल अनुत्तम यानि घटिया नियम है। मैं कभी किसी के प्रत्यक्ष नहीं होता। यदि श्री कष्ण गीता बोल रहे होते तो यह नहीं कहते। वे तो सर्व के समक्ष उपस्थित थे।

इससे सिद्ध हुआ कि गीता का ज्ञान काल ब्रह्म ने श्री कष्ण जी के शरीर में प्रवेश करके कहा था। गीता अध्याय 3 के श्लोक 21-25 का हिन्दी अनुवाद :-

❖ *श्रेष्ठ व्यक्ति जैसा आचरण करते हैं, अन्य व्यक्ति भी वैसा ही आचरण करते हैं। वह जैसा भी प्रमाण जनता के समक्ष कर देता है, उस क्षेत्र के अन्य व्यक्ति समुदाय उसके अनुसार बरतने लगते हैं।(3/21)*

❖ *हे पार्थ यानि हे अर्जुन! मेरे लिए तीनों लोकों में न तो कुछ कर्तव्य है और न कोई प्राप्त करने योग्य वस्तु अप्राप्त है। फिर भी मैं (गीता ज्ञान दाता) कर्मों में ही बरतता हूँ।(3/22)*

❖ *क्योंकि हे पार्थ! यदि कदाचित मैं सावधान होकर कर्मों में न बरतूँ तो बड़ी हानि हो जाए क्योंकि मनुष्य सब प्रकार से मेरे ही मार्ग का अनुसरण करते हैं।(3/23)*

❖ *यदि मैं सावधान होकर शुभ कर्म न करूँ तो ये सब मनुष्य नष्ट-भ्रष्ट हो जायें और मैं यानि गीता ज्ञान दाता संकरता करने वाला होऊँ। इस लोक की समस्त प्रजा को नष्ट करने वाला बनूँ।(3/24)*

❖ *हे भारत यानि भरतवंशी अर्जुन! कर्मों में आसक्त हुए अज्ञानी जन जिस प्रकार दृढ़तापूर्वक कर्म करते हैं। आसक्ति रहित विद्वान व्यक्ति को चाहिए कि लोक संग्रह करता हुआ यानि शुभ कर्मों का प्रचार करके तथा स्वयं अच्छा आचरण करके अपने अनुयाई बनाने के लिए उसी प्रकार दृढ़ता से कर्म करे। जैसे अज्ञानी गलत को पूरी लगन से करता है, मुड़कर नहीं देखता। उसी प्रकार परमार्थी को परमार्थ पर लगना चाहिए।(3/25)*

।। विद्वानों (शिक्षित) व्यक्तियों को चाहिए कि वे शास्त्रों अनुसार साधना करें।।

❖ *गीता अध्याय 3 श्लोक 25 से 29 तक का भावार्थ :- पवित्र यजुर्वेद अध्याय 40 श्लोक 13 में वेद ज्ञान दाता ब्रह्म ने कहा है कि जिस व्यक्ति को अक्षर ज्ञान है उसे विद्वान कहते हैं जिसे अक्षर ज्ञान नहीं है उसे अविद्वान कहते हैं। परन्तु विद्वान तथा अविद्वान की वास्तविक जानकारी तत्वदर्शी सन्त ही बताते हैं उनसे सुनों। पूर्ण परमात्मा कविर्देव जी ने अपनी अमृतवाणी (कविर्वाणी) में विद्वान तथा अविद्वान की परिभाषा बताई है। कहा है कि जिसे तत्वज्ञान है वह वास्तव में विद्वान है। केवल अक्षर ज्ञान (किसी भाषा का ज्ञान) होने से विद्वान नहीं होता। क्योंकि जो संस्कृत भाषा में विद्वान माना जाता है, वह पंजाबी भाषा को न जानने वाला उस भाषा में अविद्वान है।*

इसी आधार से गीता अध्याय 3 श्लोक 25 से 29 तक के ज्ञान को जानना है। श्लोक 25 में कहा है कि शास्त्रअनुकूल साधना रूपी कर्तव्य कर्म में आसक्त अविद्वान अर्थात् अशिक्षित् जिस प्रकार भक्ति कर्त्तव्य कर्म करते हैं। विद्वान (शिक्षित्) भी लोक संग्रह अर्थात् अधिक अनुयाई इकट्ठे करना चाहता हुआ उसी प्रकार करे (जैसे अविद्वान अर्थात् भोले भाले अशिक्षित शास्त्रानुकूल साधना तत्वदर्शी सन्त से प्राप्त करके करते हैं इस प्रकार पाप को प्राप्त नहीं होगा।)

❖ *अध्याय 3 श्लोक 26 का भावार्थ है कि तत्वदर्शी सन्त द्वारा शास्त्रविधि अनुसार साधना प्राप्त अशिक्षित व्यक्ति की बुद्धि में शिक्षित (अक्षर ज्ञान युक्त) व्यक्ति भ्रम उत्पन्न न करे अपितु स्वयं भी शास्त्रअनुसार साधना करे तथा उनको भी प्रोत्साहित करे। जैसे परमेश्वर कबीर बन्दी छोड़ जी तत्वदर्शी संत की भूमिका करने के लिए काशी नगर में जुलाहा जाति में प्रकट हुए। लोग उन्हें अशिक्षित अर्थात् अविद्वान मानते थे। परन्तु वे सर्व विद्वानों के विद्वान तथा सर्व भगवानों के भगवान हैं। अन्य अशिक्षित व्यक्तियों को शास्त्रविधि अनुसार साधना प्रदान करते थे। अन्य अक्षर ज्ञानयुक्त व्यक्ति (ब्राह्मण) उन मन्दबुद्धि वाले भोले-भाले व्यक्तियों की बुद्धि में भ्रम उत्पन्न कर देते थे कहा करते यह जुलाहा तो अशिक्षित है। यह क्या जाने शास्त्रों के गूढ़ रहस्य को तुम्हारी साधना व्यर्थ है। वे भोले-भाले अशिक्षित विचलित हो जाते थे तथा मार्ग भ्रष्ट होकर जीवन व्यर्थ कर लेते थे। गीता अध्याय 3 श्लोक 26 में यही कहा है कि वह विद्वान (शिक्षित व्यक्ति) यदि जनता को शिष्य रूप में इकट्ठा करना चाहता है तो स्वयं भी शास्त्रअनुसार साधना करे तथा उन भोले-भालों से भी करावे।(3/26)*

❖ *अध्याय 3 श्लोक 27 से 29 का भावार्थ है कि प्राणी जब तक पूर्ण सन्त की शरण ग्रहण नहीं करता तब तक अपने संस्कार ही प्राप्त करता है। संस्कार का फल तीनों भगवानों (रजगुण ब्रह्मा, सतगुण विष्णु तथा तमगुण शिव) द्वारा दिया जाता है तीनों गुणों (रजगुण ब्रह्मा,सतगुण विष्णु तथा तमगुण शिव) प्रकति अर्थात् दुर्गा से उत्पन्न है। वह शिक्षित व्यक्ति तत्वज्ञान से अपरिचित होने से मूढ़ कहा जाता है फिर वह अहंकार वश अपने को कर्मों का कर्त्ता मानता है। अहंकार वश सर्व शास्त्रों को तत्वज्ञानी द्वारा अच्छी तरह समझ कर भी अपने अहंकार युक्त हठ को स्वभाव वश नहीं छोड़ता अर्थात् वास्तविक्ता को आँखों देखकर भी स्वीकार नहीं करता परन्तु तत्वदर्शी सन्त तत्वज्ञान के आधार से प्रत्येक प्रभु की शक्ति से परिचित होकर इन भगवानों व शास्त्रों विरूद्ध साधना पर आसक्त नहीं होता। वे शिक्षित परन्तु तत्वज्ञान से अपरिचित स्वयं तो तीनों प्रभुओं में अपने स्वभाव वश आसक्त रहते हैं उनको चाहिए कि वे उन पूर्णतया न समझने वाले मन्द बुद्धि अर्थात् भोले-भाले अशिक्षितों को पूर्णतया शास्त्र समझ कर भी अहंकार वश सत्य न स्वीकार करने वाले विद्वान अर्थात् शिक्षित जन विचलित न करें। इसलिए उन अशिक्षितों को श्लोक 35 में सावधान किया है कि दूसरों की शास्त्रविरूध साधना जो गुण रहित है चाहे कितनी ही तड़क-भड़क वाली व देखने व सुनने में अच्छी हो उसे स्वीकार न करें। अपनी शास्त्र अनुकूल साधना को मरते दम तक करता रहे। दूसरों की साधना भय उत्पन्न कर देती है जिस कारण मन्द बुद्धि व्यक्ति वास्तविक साधना को त्यागकर गुण रहित धर्म (धार्मिक क्रिया) को स्वीकार कर लेते हैं जो बहुत हानिकारक होती है।*

❖ *गीता अध्याय 3 के श्लोक 30 में कहा है कि अर्जुन अब ज्ञान योग द्वारा मेरे पर आश्रित होकर अर्थात् सर्व धार्मिक कर्मों को मुझमें त्यागकर निःइच्छा, ममता रहित युद्ध में होने वाले संभावित दुःख को त्यागकर युद्ध कर।*

विचार करें :-- गीता अध्याय 3 के श्लोक 31-32 का सार है कि जो ऊपर लिखे मेरे मत का अनुसरण करते हैं वे बुरे कर्मों से बच जाते हैं। जो ऐसा नहीं करते वे मूर्ख-अज्ञानी हैं। वे सर्व शास्त्र विरूद्ध ज्ञानों पर आसक्त हैं जो हानिकारक है। उनका पतन निश्चय है। ऊपर लिखे मत (सलाह) से तात्पर्य यह है कि देवी-देवताओं, प्रेतों व पित्रों की पूजा न करके केवल परमात्मा की आराधना करनी चाहिए। यज्ञ व ॐ नाम का जाप भी निष्काम भाव से अपना मानव कर्तव्य जान कर तथा पूरा

गुरु बनाकर शास्त्र अनुकूल करना चाहिए। शिक्षित व्यक्तियों को शास्त्रविधि अनुसार साधना कर रहे अशिक्षितों को भ्रमित नही करना चाहिए अपितु स्वयं भी उसी शास्त्रविधि अनुसार साधना को स्वीकार करके आत्मकल्याण कराना चाहिए।

❖ *विचार करें :-- गीता अध्याय 3 के श्लोक 33-34 में कहा है कि शिक्षित व्यक्ति जो तत्वज्ञान हीन हैं वे मूढ़ स्वभाव वश आँखों देखकर भी सत्य को स्वीकार नहीं करते तथा उन चातुर (शिक्षित) व्यक्तियों के अनुयाई भी अपने स्वभाववश सत्य को स्वीकार न करके उन चालाक गुरूओं के साथ ही चिपके रहते हैं वे भी मूढ़ हैं। समझाने से भी नहीं मानते। हठ करके भी उन्हें समझाना अति कठिन है। कबीर परमेश्वर से तत्वज्ञान प्राप्त करके सन्त गरीबदास जी महाराज ने कहा है :-*

गरीब चातुर प्राणी चोर हैं, मूढ़ मुगध हैं ठोठ। सन्तों के नहीं काम के इनको दे गल जोट।।

भावार्थ :- जो व्यक्ति तत्वज्ञान को सुनकर सद्ग्रन्थों में आँखों देखकर भी अभिमानवश यथार्थ भक्ति मार्ग स्वीकार नहीं करते, वे चालाक प्राणी परमात्मा के चोर हैं। जो उनके अनुयाई हैं, वे भी सत्य को आँखों देखकर भी उन चालाक गुरूओं को नहीं त्यागते। वे मूढ़ हैं। ऐसे व्यक्ति संतों के काम के नहीं हैं। परमात्मा उनको एक-दूसरे से बाँधे रखे अर्थात् वे शुभ कर्महीन हैं। उनके भाग्य में सत्य साधना नहीं है। तत्वदर्शी संतों को चाहिए कि उनके साथ अधिक ज्ञान चर्चा न करें। कबीर जी ने कहा है कि :-

कबीर, मूर्ख के समझावतें, ज्ञान गांठी का जाय। कोयला ना उजला, चाहे सौ मन साबुन लाय।।

भावार्थ :- कबीर परमेश्वर जी ने कहा है कि मूर्ख को समझाने से अपने तत्वज्ञान को न गवाऐं यानि चतुर लोग आपके तत्वज्ञान को सुनकर स्वयं वक्ता बनकर जनता को ठगेंगे। मूर्ख मानेगा नहीं। जैसे कोयला अंदर तक काला होता है। कोयले को चाहे सौ मन (400 कि.ग्रा.) साबुन लगाकर साफ करना चाहे तो भी सफेद नहीं होगा। इसी प्रकार मूर्ख व्यक्ति तत्वज्ञान नहीं समझेगा।

इसी अध्याय 3 श्लोक 33-34 में यह भी कहा है कि राग द्वेष नहीं करना चाहिए। स्वयं भगवान कष्ण जी पाण्डवों के राग में महाभारत के युद्ध के दौरान अश्वत्थामा (द्रौणाचार्य के पुत्र) के बारे में युधिष्ठिर से भी झूठ बुलवाई तथा बबरिक (जिसे श्याम जी भी कहते हैं) का सिर कटवाया कहीं बबरिक पाण्डवों को पराजित न कर दे। क्योंकि बबरिक एक बलशाली योद्धा तथा धनुषधारी था जिसने एक ही तीर से पीपल के पेड़ के सभी पत्ते छेद दिए थे और प्रतिज्ञा कर रखी थी कि जो सेना हारती दिखाई देगी, उसी के पक्ष में युद्ध करूंगा। कष्ण जी में प्रवेश काल ने पाण्डवों को विजयी करना था।

एक समय भस्मागिरी ने भगवान शिव को वचन बद्ध करके भस्म कंडा मांग कर शिव को मारना चाहा था। पार्वती को पत्नी बनाने का दुष्विचार करके शिव के पीछे भागा तो भगवान श्री विष्णु जी ने शिव जी के राग में पार्वती का रूप बनाया तथा भस्मागिरी को गंडहथ नाच नचा कर भस्म किया। ''गरीब, शिव शंकर के राग में, बहे कंष्ण मुरारी।'' *राग द्वेष से भगवान भी नहीं बचे क्योंकि पाण्डवों से राग तो कौरवों से द्वेष तथा शिवजी से राग तो भस्मागिरी से द्वेष स्वयं सिद्ध है। आम प्राणी (अर्जुन) कैसे राग द्वेष से बच सकता है? द्वेष बिना युद्ध हो ही नहीं सकता। इससे सिद्ध है कि गीता जी में अध्यात्म ज्ञान तो काल भगवान (ब्रह्म) ने सही दिया परंतु जीव में विकार (काम, क्रोध, मोह, लोभ, अहंकार, राग-द्वेष तथा शब्द-स्पर्श, रूप, रस, गंध) भर दिए जिनसे परवश होकर भगवान काल के अवतार भी विवश हो गए जिसके कारण काल जाल से नहीं निकल सकते। इसको*

(काल को) डर बना रहता है कि कहीं जीव तेरे जाल से निकल न जाएं। इसलिए तत्वज्ञान सुनकर पूर्ण सन्त की शरण ग्रहण करके पूर्ण परमात्मा की भक्ति करो, तब राग-द्वेष समाप्त होंगे।

।। दूसरों की दिखावटी घटिया साधना से अपनी शास्त्रविधि अनुसार साधना अच्छी।।

गीता अध्याय 3 श्लोक 35 का भावार्थ :- गीता अध्याय 3 के श्लोक 35 में कहा है कि दूसरों की गलत साधना (गुण रहित) जो शास्त्रानुकूल नहीं है। चाहे वह कितनी ही अच्छी नजर आए या वे अज्ञानी चाहे आपको कितना ही डराये उनकी साधना भयवश होकर स्वीकार नहीं करनी चाहिए। अपनी शास्त्रानुकूल गुरु जी द्वारा दिया गया उपदेश पर दंढ़ विश्वास के साथ लगे रहना चाहिए। विचलित नहीं होना चाहिए। अपनी सत्य पूजा अंतिम श्वांस तक करनी चाहिए तथा अपनी सत्य साधना में मरना भी बेहतर है। उदाहरण के लिए पढ़ें यह सत्य कथा :-

।। एक दुःखी परिवार की कहानी।।

उदाहरण :- भक्त रमेश जैन पुत्र श्री ओमप्रकाश जैन, शांती नगर, पटियाला चौंक, जीन्द (हरियाणा) में रहता है। इसकी पत्नी का नाम भक्तमति कमलेश है तथा चार संतान हैं - दो लड़की तथा छोटे दो जुड़वा लड़के (सुनिल व अनिल) हैं। इस परिवार पर कर्मदण्ड की मार इतनी थी कि सुनकर भी कलेजा काँप उठता है। भक्त रमेश जैन की पटियाला चौंक, जीन्द (हरियाणा) में रंग रोगन की दुकान है। इसकी पत्नी कमलेश को दमा बहुत वर्षों से था। एक लड़की बड़ी से छोटी जो उस समय 8 वर्ष की थी को बचपन से दौरे पड़ते थे। सब जगह डॉ. व हस्पतालों से ईलाज करवा लिया था। लेकिन आराम नहीं मिला। अपनी परम्परागत पूजा जैन धर्म की भी करते थे। इसके साथ-साथ अन्य संतों, सेवड़ों व झाड़ा आदि लगाने वालों से भी राहत चाही। देवी-देवताओं की पूजा, पित्रों की पूजा, गुगा पीर की पूजा, हनुमान की पूजा, राम-कष्ण की पूजा, मन्दिर में मूर्ति पूजा, श्राद्ध निकालना आदि सब करते थे। दोनों लड़के (सुनिल-अनिल) जन्म से बीमार रहते थे। उस समय (जब यह परिवार जनवरी 1995 में नाम लेकर कबीर साहिब की शरण में इस दास के माध्यम से आया) जुड़वाँ बच्चों की आयु 5 वर्ष की थी। भक्त रमेश व बहन कमलेश ने बताया कि इन लड़कों पर दवाई खर्च लगभग तीन लाख रूपए हो चुका है और कमलेश व लड़की की बीमारी का खर्च अलग था। एक साधारण दुकानदार भला इतने खर्च को किस प्रकार सहन करे? जो पैसा बचता सब बीमार पर लग जाता था। कर्ज भी काफी हो गया था। फिर उन्होंने सतसंग सुना कि दुःखी जीव जो परमात्मा कबीर साहिब की शरण में आकर ठीक हो गए और सत भक्ति पूर्ण परमात्मा (सतपुरुष कबीर साहिब) की कर रहे हैं। अन्य सर्व पूजा जो काल तक की करते थे त्याग कर सुखी हो गए, उनकी जुबानी सुन कर विश्वास हो गया कि अब हमें सही ठिकाना (सतमार्ग) पाया है और जनवरी 1995 में उन्होंने नाम ले लिया। अपने पूर्ण ब्रह्म कबीर साहिब के चरणों में सच्चे दिल से भक्ति करने लग गए और शास्त्रानुकूल साधना गुरु जी के बताए अनुसार शुरु कर दी।

कुछ दिनों बाद बहन कमलेश को दमा नहीं रहा, न ही लड़की को दौरे तथा दोनों लड़के भी पूर्णरूप से स्वस्थ हो गए। उन्होंने सुख की श्वांस ली। फिर लगभग नौ महीने के बाद गुगापीर की पूजा का दिन आ गया। उस दिन कमलेश की पड़ोसन ने आकर कहा 'क्या कमलेश गुगा पीर की पूजा नहीं करनी?' बहन कमलेश ने कहा 'हमने कबीर साहिब की शरण (नाम मन्त्र) ले रखी है और हमारे गुरु जी ने सर्व देवी-देवताओं की शास्त्रविधि विरूद्ध पूजा तथा व्रत आदि मना कर रखे

हैं।' यह सुन कर पड़ोसन ने कहा 'हे बहन! अपनी पुरानी साधना नहीं छोड़ा करते। मैंने भी अमूक संत से नाम ले रखा है। मैं तो सारी पूजा करती हूँ। एक हमारे रिश्तेदार ने गुगापीर की पूजा नहीं की थी। उसका एक ही लड़का था वही मर गया। अब तूँ देख ले।' इस बात से भयभीत हो कर भक्तमति कमलेश ने गुगापीर की पूजा कर ली। अगले ही दिन लड़की को दौरा आ गया, दोनों लड़के सिविल हस्पताल (जीन्द) में दाखिल हो गए और कमलेश को दमा फिर शुरु हो गया। कबीर साहिब कहते हैं :-

कबीर, सौ वर्ष तो गुरु की पूजा, एक दिन आन–उपासी। वो अपराधी आत्मा, पड़े काल की फांसी।

भावार्थ :- सतगुरू की शरण में सौ वर्ष से शास्त्र विधि अनुसार साधना कर रहा साधक यदि एक दिन आन-उपासना कर लेता है यानि अन्य देवी-देवता की शास्त्र विरूद्ध पूजा करता है तो उसका नाम खंडित हो जाता है। उसको काल के लोक में अनेकों कष्ट उठाने पड़ते हैं। परमात्मा उसकी सहायता नहीं करते।

भक्त रमेश का सारा परिवार फिर मेरे (संत रामपाल दास के) पास आया। अपनी गलती की क्षमा याचना की। फिर दोबारा उपदेश (नाम) दिया। उसके बाद वह पूरा परिवार बिल्कुल स्वस्थ है। कोई आन उपासना नहीं करते हैं। पुराना मकान बेच कर नई कोठी बना ली है और कर्ज मुक्त भी हो गए हैं। आज (दिनांक : 02-01-2012) सोलह वर्ष से ज्यादा हो चुके हैं। सबको कहते हैं कि हमारे जैसा दुःखी कोई नहीं था। जैसी कबीर साहिब ने हमारी प्रार्थना सुनी ऐसी सब जीवों की सुनें और गुरुदेव जी (रामपाल दास महाराज) से नाम लेकर अपना जीवन धन्य बनाएँ तथा काल-जाल से निकलें।

।। मान बड़ाई जान की दुश्मन।।

विचार करें :-- गीता अध्याय 3 के श्लोक 33, 34 का भावार्थ है कि सर्व प्राणी प्रकति (माया) के वश ही हैं। स्वभाववश कर्म करते हैं। ऐसे ही ज्ञानी भी अपनी आदत वश कर्म करते हैं फिर हठ क्या करेगा?

सार : -- अज्ञानी अपनी गलत पूजा को नहीं त्यागते चाहे कितना आग्रह करें, चाहे सद्ग्रन्थों के प्रमाण भी दिखा दिए जाऐं वे नहीं मानते। इसी प्रकार ज्ञानी-विद्वान पुरुष मान वश पैसा प्राप्ति व अधिक शिष्य बनाने की इच्छा के कारण गलत त्यागकर सच्चाई का अनुसरण नहीं करते। दोनों (ज्ञानी व अज्ञानी) स्वभाव वश चल रहे हैं। इसलिए भक्ति मार्ग गलत दिशा पकड़ चुका है। इन दोनों को समझाना व्यर्थ है।

गरीब, चातूर प्राणी चोर हैं, मूढ मुग्ध हैं ठोठ। संतों के नहीं काम के, इनकूं दे गल जोट।।

भावार्थ :- संत गरीबदास जी ने बताया है कि तत्वज्ञानहीन गुरूजन शास्त्रों को ठीक से न समझकर उनके विपरित अध्यात्म ज्ञान बताते हैं तथा शास्त्रों के विरूद्ध भक्ति विधि बताते हैं। उनके अनुयाई अपने अज्ञानी गुरूजनों द्वारा बताए ज्ञान तथा साधना पर लगे हैं। तत्वदर्शी संत उन अज्ञानी गुरूओं से निवेदन करता है कि आप शास्त्र विरूद्ध अपनी इच्छा से मनमाना आचरण कर रहे हो। शास्त्रों से प्रमाण दिखाता है। प्रमाणों को आँखों देखकर भी अज्ञानी गुरूजन सत्य को स्वीकार नहीं करते। अपना अपमान होने के भय से अपने अनुयाईयों को भी भ्रमित करते हैं कि यह संत झूठ बोल रहा है। इसकी बातों में न आना। हम जो ज्ञान तथा समाधान बता रहे हैं, यह सब शास्त्र प्रमाणित है। तत्वदर्शी संत उनके अनुयाईयों को शास्त्रों के प्रमाण दिखाकर उनकी भक्ति विधि को गलत सिद्ध करता है तो भी वे मूढ़ अंध श्रद्धालु कहते हैं कि हमारे गुरू जी जो साधना

बताते हैं, वह सत्य है। ऐसे व्यक्तियों के विषय में संत गरीबदास जी ने बताया है कि वे फर्जी संत तो चातुर हैं यानि हेराफेरी मास्टर हैं। वे अपनी दुकान चलाने के लिए आँखों देखकर भी सत्य स्वीकार नहीं करते और अपनी प्रत्यक्ष झूठी साधना को सत्य मानते हैं। वे परमात्मा नहीं चाहते। वे मान-बड़ाई तथा धन के लोभी चतुर व्यक्ति हैं तथा अनुयाई उनके ऊपर मोहित हैं। सत्य देखकर भी नहीं मानते। वे ठेठ मूढ़ हैं यानि पूर्ण रूप से मूर्ख हैं। ऐसे व्यक्ति तत्वदर्शी संतों के काम के नहीं हैं। उन दोनों गुरू-शिष्यों को समझाना व्यर्थ में समय व्यर्थ करना है। उनका गला जोट दो यानि उनको एक-दूसरे से चिपके रहने दो। गल जोट करने का भावार्थ है जैसे व्यापारी लोग काटड़ों (भैंस के नर बच्चों) को गाँव से मोल लेकर कसाईयों को बेचने के लिए जाते थे। उस समय व्यापारी लोग पशुओं को पैदल लाते-ले जाते थे क्योंकि वाहन नहीं बने थे तो पशुओं (काटड़ों व जो भैंस बांझ होती थी, उनको) को रस्से के साथ एक-दूसरे को गले से बाँध देते थे। कारण था कि इस प्रकार बाँधने से वे इधर-उधर भागकर मालिक को परेशान नहीं कर पाते थे। ऐसे गुरू तथा शिष्य काल कसाई के पास जाते हैं। ये ऐसे-ऐसे इकट्ठे रहेंगे तो तत्वदर्शी संतों को बाधा नहीं करेंगे यानि इनके साथ अधिक छेड़छाड़ करना ठीक नहीं।

विवेचन :- मेरे यानि रामपाल दास के अतिरिक्त अन्य सब अनुवादकों ने गीता अध्याय 3 श्लोक 35 का अर्थ गलत किया है जो इस प्रकार किया है :-

अच्छी प्रकार में लाये हुए दूसरे के धर्म से गुण रहित भी अपना धर्म अति उत्तम है। अपने धर्म में मरना भी कल्याणकारक है। दूसरे का धर्म भय देने वाला है।

विचार करें कि यदि यह अनुवाद सही है तो गीता के अठारह अध्यायों के ज्ञान की क्या आवश्यकता थी? फिर तो जो जैसी साधना कर रहा है, करता रहे। गीता अध्याय 7 श्लोक 12-15 तथा 20-23 में कहा है कि तीनों गुणों यानि श्री ब्रह्मा, श्री विष्णु तथा श्री शिव से मिलने वाले लाभ के द्वारा जिनका ज्ञान हरा जा चुका है यानि जो इन देवताओं की पूजा पर दृढ़ हैं। अन्य किसी की बात नहीं सुनते। वे राक्षस स्वभाव को धारण किए हुए मनुष्यों में नीच, दूषित कर्म करने वाले मूर्ख मेरी भक्ति भी नहीं करते। जिन देवताओं की भक्ति अज्ञानी जन करते हैं। उनकों मैंने ही कुछ शक्ति दे रखी है, परंतु उन अज्ञानियों को उस साधना का फल क्षणिक यानि शीघ्र समाप्त होने वाला है।

फिर गीता अध्याय 16 श्लोक 23-24 में यह ज्ञान देने की क्या आवश्यकता थी कि शास्त्रविधि को त्यागकर अपनी इच्छा से मनमाना आचरण करते हैं, उनको न तो सुख प्राप्त होता है, न सिद्धि प्राप्त होती है, उन उनकी गति यानि मुक्ति होती है अर्थात् व्यर्थ साधना है। गीता अध्याय 16 श्लोक 24 में कहा है कि इससे तेरे लिए अर्जुन कर्तव्य अर्थात् जो आध्यात्मिक कर्म करने चाहिऐं तथा अकर्तव्य अर्थात् जो कर्म नहीं करने चाहिऐं, की व्यवस्था में शास्त्र ही प्रमाण हैं। पाठकों से निवेदन है कि गीता अध्याय 3 श्लोक 35 का वास्तविक अर्थ पहले किया है, वह ठीक है।

❖ *अध्याय 3 श्लोक 36-43 तक का भावार्थ है कि श्लोक 36 में अर्जुन ने प्रश्न किया कि ''हे भगवान! यह मनुष्य न चाहता हुआ भी परवश हुआ पाप आचरण में कैसे लग जाता है?'' गीता ज्ञान दाता ने श्लोक नं. 37 से 43 में उत्तर दिया है कि तीनों गुणों (रजगुण ब्रह्मा, सतगुण विष्णु तथा तमगुण शिव) के प्रभाव से प्रेरित होकर मानव अज्ञान को प्राप्त हो जाता है। फिर काम (Sex), क्रोध, मोह, लोभ, अहंकार वश होकर पाप आचरण करता है। मन इन सब पापों को करवाने वाला इन्द्रियों का मुखिया है। इस मन रूपी शत्रु को तत्वज्ञान से मार डाल।*

नकली नामों से मुक्ति नहीं

एक सुशिक्षित सभ्य व्यक्ति मेरे पास आया। वह उच्च अधिकारी भी था तथा किसी अमुक पंथ व संत से नाम भी ले रखा था व प्रचार भी करता था वह मेरे (संत रामपाल दास) से धार्मिक चर्चा करने लगा। उसने बताया कि ''मैंने अमूक संत से नाम ले रखा है, बहुत साधना करता हूँ। उसने कहा मुझे पाँच नामों का मन्त्र (उपदेश) प्राप्त है जो काल से मुक्त कर देगा।'' मैंने (रामपाल दास ने) पूछा कौन-2 से नाम हैं। वह भक्त बोला यह नाम किसी को नहीं बताने होते। उस समय मेरे पास बहुत से हमारे कबीर साहिब के यथार्थ ज्ञान प्राप्त भक्त जन भी बैठे थे जो पहले नाना पंथों से नाम उपदेशी थे। परंतु सच्चाई का पता लगने पर उस पंथ को त्याग कर इस दास (रामपाल दास) से नाम लेकर अपने भाग्य की सराहना कर रहे थे कि ठीक समय पर काल के जाल से निकल आए। पूरे परमात्मा (पूर्ण ब्रह्म) को पाने का सही मार्ग मिल गया। नहीं तो अपनी गलत साधना वश काल के मुख में चले जाते।

उन्हीं भक्तों में से एक ने कहा कि मैं भी पहले उसी पंथ से नाम उपदेशी (नामदानी) था। यही पाँच नाम मैंने भी ले रखे थे परंतु वे पाँचों नाम काल साधना के हैं, सतपुरुष प्राप्ति के नहीं हैं। वे पाँचों नाम मैंने [भक्त जो दूसरे पंथ से आया था अब कबीर साहिब के अनुसार इस दास (रामपाल दास) से नाम ले रखा है कह रहा है उस अमुक संत-पंथ के उपदेशी सभ्य व्यक्ति को] भी ले रखे थे। वे नाम हैं - 1. ज्योति निंरजन 2. ओंकार 3. रंरकार 4. सोहं 5. सतनाम।

तब मैंनें उस पुण्यात्मा को समझाया कि आप जरा विचार करो। संतमत सतसंग साहिब कबीर से चला है। साहिब कबीर स्वयं पूर्ण परमात्मा हैं। उन्होंने ही इस काल लोक में आकर अपनी जानकारी आप ही देनी पड़ी। क्योंकि काल ने साहिब कबीर का ज्ञान गुप्त कर रखा है। चारों वेदों, अठारह पुराणों, गीता जी व छः शास्त्रों में केवल ब्रह्म (काल ज्योति निंरजन) की उपासना की जानकारी है। सतपुरुष की उपासना का ज्ञान नहीं है।

❖ *इसी पंथ (पाँच नाम देने वाले पंथ) से निकली शाखा जो हरियाणा में एक शहर में सन् 1948 से चली है। वे पहले वाले संत तो यह पाँच नाम देते थे। परंतु दूसरी गद्दी वाले ने तीन अन्य नाम प्रारम्भ कर दिए। 1. सतपुरूष, 2. अकाल मूर्त, 3. शब्द स्वरूपी राम। ये तीनों भी व्यर्थ हैं।*

एक तुलसी दास जी हाथ रस वाले (जिनको उस तुलसी दास जिसने रामायण का हिन्दी निरूपण किया का अवतार मानते हैं) ने कबीर सागर, कबीर वाणी साखी व बीजक पढ़ा। फिर उसने उसमें से यही पाँच नाम निकाल लिए। वास्तव में इन पाँच नामों में सतनाम की जगह 'शक्ति' शब्द है। परंतु तुलसी दास (हाथरस वाले) ने शक्ति शब्द की जगह सतनाम जोड़ कर पाँच नाम का मन्त्र बनाकर काल साधना ही समाज में प्रवेश कर दी। अपने द्वारा रची घट रामायण प्रथम भाग पष्ठ 27 पर स्वयं इन्हीं पाँचों नामों को काल के नाम कहा है तथा सत्यनाम तथा आदिनाम (सारनाम) बिना सत्यलोक प्राप्ति नहीं हो सकती, कहा है। इन्हीं पाँचों नामों को कबीर साहिब ने भी काल साधना के बताए हैं। इन्हीं पाँचों नामों की साधना के आधार से श्री शिवदयाल सिंह सेठ आगरा पन्नी गली वाले ने अपना राधा स्वामी पंथ बिना गुरू बनाए प्रारम्भ किया था। उसके पश्चात् उसके अनुयाईयों के बड़े-2 भक्तजन समूह इकत्रित हो गए जो मुक्त नहीं हो सकते और कबीर साहेब ने कहा है कि इनसे न्यारा नाम सत्यनाम है उसका जाप पूरे अधिकारी गुरु से लेकर पूरा जीवन गुरु मर्यादा में रहते हुए सार नाम की प्राप्ति पूरे गुरु से करनी चाहिए।

सतनाम के प्रमाण के लिए कबीर पंथी शब्दावली (पष्ठ नं. 266-267) से सहाभार

अक्षर आदि जगत में, जाका सब विस्तार। सतगुरु दया सो पाइये, सतनाम निजसार।।112।।
सतगुरुकी परतीति करि, जो सतनाम समाय। हंस जाय सतलोक को, यमको अमल मिटाय।।117।।

वह सतनाम-सारनाम उपासक सतलोक चला जाता है। उसका पुनर्जन्म नहीं होता। हम सबने कबीर साहिब के ज्ञान को पुनः पढ़ना चाहिए तथा सोचना चाहिए कि सतलोक प्राप्ति केवल कबीर साहिब के द्वारा दिए गए मन्त्र से होगी।

।।धर्मदास को सतनाम कबीर साहेब ने दिया।।

जो मन्त्र (नाम) साहिब कबीर ने धर्म दास जी को दिया। प्रमाण :–

कबीर पंथी शब्दावली (पष्ठ नं. 284-285) से सहाभार

(चौका आरती)

प्रथमहिं मंदिर चौक पुराये। उत्तम आसन श्वेत बिछाये।। हंसा पग आसन पर दीन्हा। सतकबीर कही कह लीन्हा।।
नाम प्रताप हंस पर छाजे। हंसहि भार रती नहिं लागे।। कहै कबीर सुनो धर्मदासा। ऊँ–सोहं शब्द प्रगासा।।

(कबीर शब्दावली से लेख समाप्त)

ऊपर के शब्द चौका आरती में साहेब कबीर ने धर्मदास जी को सत्यनाम दिया। वह -

''कहै कबीर सुनो धर्मदासा, ऊँ सोहं शब्द प्रगासा''

यह ''ऊँ-सोहं'' सत्यनाम स्वयं साहेब कबीर ने धर्मदास जी को दिया। इससे प्रमाणित है कि इस नाम के जाप से जीवात्मा सार शब्द पाने योग्य बनेगी। यदि सार शब्द पाने के योग्य नहीं बना तथा सतगुरु ने सारशब्द नहीं दिया तो आपका जीवन व्यर्थ गया। चूंकि सत्यनाम (ऊँ-सोहं) से आप कई मानव शरीर भी पा सकते हो। स्वर्ग में भी वर्षों तक रह सकते हो, यह इतना उत्तम नाम है। परंतु सार शब्द मिले बिना सतलोक प्राप्ति नहीं अर्थात् पूर्ण मुक्ति नहीं।

पवित्र कबीर सागर के अध्याय ''ज्ञान प्रकाश'' पष्ठ 62 पर भी संत धर्मदास जी को सतनाम देने का प्रकरण है जिसमें ये ही दो अक्षर लिखे हैं:- *ॐ–सोहं जावन बीरू, धर्मदास सों कह कबीरू।।*

।। सतनाम का गरीबदास जी महाराज की वाणी में प्रमाण।

गरीबदास जी महाराज कहते हैं कि :

ऊँ सोहं पालड़ै रंग होरी हो, चौदह भवन चढावै राम रंग होरी हो।
तीन लोक पासंग धरै रंग होरी हो, तो न तुलै तुलाया राम रंग होरी हो।।

इसका अर्थ है सत्यनाम (ऊँ-सोहं) यदि भक्त आत्मा को मिल गया, वह (स्वाँसों से सुमरण होता है) एक स्वाँस-उस्वाँस भी इस मन्त्र का जाप हो गया तो उसकी कीमत इतनी है कि एक स्वाँस-उस्वाँस ऊँ-सोहं के मन्त्र का एक जाप तराजू के एक पलड़े में = दूसरे पलड़े में चौदह भुवनों को रख दें तथा तीन लोकों को तुला की त्रुटि ठीक करने के लिए अर्थात् पलड़े समान करने के लिए रख दे तो भी एक स्वाँस का (सत्यनाम) जाप की कीमत ज्यादा है अर्थात् बराबर भी नहीं है। पूर्ण संत से उपदेश प्राप्त करके नाम जाप करने से लाभ होगा अर्थात् बिना गुरु बनाए स्वयं सत्यनाम

जाप व्यर्थ है। जैसे रजिस्ट्री पर तहसीलदार हस्ताक्षर करेगा तो काम बनेगा, कोई स्वयं ही हस्ताक्षर कर लेगा तो व्यर्थ है। इसी का प्रमाण साहेब कबीर देते हैं -

कबीर, कहता हूँ कही जात हूँ, कहूँ बजा कर ढोल। स्वाँस जो खाली जात है, तीन लोक का मोल।।
कबीर, स्वाँस उस्वाँस में नाम जपो, व्यर्था स्वाँस मत खोय। न जाने इस स्वाँस को, आवन होके न होय।।

इसलिए यदि गुरु मर्यादा में रहते हुए सत्यनाम जपते-2 भक्त प्राण त्याग जाता है, सारनाम प्राप्त नहीं हो पाता, उसको भी सांसारिक सुख सुविधाएँ, स्वर्ग प्राप्ति और लगातार कई मनुष्य जन्म भी मिल सकते हैं और यदि पूर्ण संत न मिले तो फिर चौरासी लाख जूनियों व नरक में चला जाता है। यदि अपना व्यवहार ठीक रखते हुए गुरु जी को साहेब का रूप समझ कर आदर करते हुए सतनाम प्राप्त कर लेता है व प्राणी जीवन भर मन्त्र का जाप करता हुआ तथा गुरु वचन में चलता रहेगा। फिर गुरु जी सारनाम देगें। वह सत्यलोक अवश्य जाएगा। जो कोई गुरु वचन नहीं मानेगा, नाम लेकर भी अपनी चलाएगा, वह गुरु निन्दा करके नरक में जाएगा और गुरु द्रोही हो जाएगा। गुरु द्रोही को कई युगों तक मानव शरीर नहीं मिलता। वह चौरासी लाख जूनियों में भ्रमता रहता है। कबीर साहिब ने सत्यनाम गरीबदास जी [छुड़ानी (हरियाणा) वाले] को दिया, घीसा संत जी (खेखड़े वाले) को दिया, नानक जी (तलवंडी जो अब पाकिस्तान में है) को दिया।

।। श्री नानक साहेब की वाणी में सतनाम का प्रमाण।।

प्रमाण के लिए पंजाबी गुरु ग्रन्थ साहिब के पष्ठ नं. 59-60 पर सिरी राग महला 1 (शब्द नं. 11)

बिन गुर प्रीति न ऊपजै हउमै मैलु न जाइ।।
सोहं आपु पछाणीऐ सबदि भेदि पतीआइ।।
गुरमुखि आपु पछाणीऐ अवर कि करे कराइ।।
मिलिआ का किआ मेलीऐ सबदि मिले पतीआइ।।
मनमुखि सोझी न पवै वीछुड़ि चोटा खाइ।।
नानक दरु घरु एकु है अवरु न दूजी जाइ।।

भावार्थ :- नानक साहेब स्वयं प्रमाणित करते हैं कि शब्दों (नामों) का भिन्न ज्ञान होने से विश्वास हुआ कि सच्चा नाम 'सोहं' है। यही सतनाम कहलाता है। पूर्ण गुरु के शिष्य की भ्रमणा मिट जाती है। वह फिर और कोई करनी (साधना) नहीं करता। मनमुखी (मनमानी साधना करने वाला) साधक या जिसको पूरा संत नहीं मिला वह अधूरे गुरु का शिष्य पूर्ण ज्ञान नहीं होने से जन्म-मरण लख चौरासी के कष्टों को उठाएगा। नानक साहेब कहते हैं कि पूर्ण परमात्मा कुल का मालिक एक अकाल पुरुष है तथा एक घर (स्थान) सतलोक है और दूजी कोई वस्तु नहीं है।

प्राण संगली-हिन्दी - के पष्ठ नं. 84 पर राग भैरव - महला 1 - पौड़ी नं. 32

साध संगति मिल ज्ञानु प्रगासै। साध संगति मिल कवल बिगासै।।
साध संगति मिलिआ मनु माना। न मैं नाह ऊँ—सोहं जाना।।
सगल भवन महि एको जोति। सतिगुर पाया सहज सरोत।।
नानक किलविष काट तहाँ ही। सहजि मिलै अंमित सीचाही।।32।।

भावार्थ :- नानक साहेब कह रहे हैं कि नामों में नाम ''ऊँ-सोहं'' यही सतनाम है। इसी से पाप कटते हैं। (किलविष कटे ताहीं)

सहज समाधी से अमत (पूर्ण परमात्मा का पूर्ण आनन्द) प्राप्त हुआ अर्थात् केवल ऊँ-सोहं के जाप से पूर्ण परमात्मा की प्राप्ति संभव है अन्यथा नहीं।

अन्य प्रमाण :- ''जन्म साखी श्री गुरू नानक साहेब जी की'' भाई बाले वाली पुस्तक में ''साखी समन्दर की चली'' नामक अध्याय में प्रमाण है कि श्री नानक जी स्वयं ॐ(ओम्)-सोहं नाम को जपते हुए समन्दर के जल पर थल की तरह चल रहे थे। उनके साथ दोनों सेवक भाई बाला तथा मर्दाना भी श्री गुरू नानक जी के आशीर्वाद से उनके पीछे-पीछे चल रहे थे।

जो इन सर्व संतों की वाणी (ग्रन्थों) में प्रमाण है तथा कबीर पंथी शब्दावली में सत्यनाम 'ऊँ–सोहं' के जाप का प्रमाण है। वह भी पूरे संत जिसको नाम देने का अधिकार हो, से ही लेना चाहिए।

प्रमाण :– कबीर पंथी शब्दावली (पष्ठ नं. 220) से सहाभार

बहुत गुरु संसार रहित, घर कोइ न बतावै।
आपन स्वारथ लागि, सीस पर भार चढावै।।
सार शब्द चीन्हे नहीं, बीचहिं परे भुलाय।
सत्त सुकृत चीन्हे बिना, सब जग काल चबाय।।18।।
यह लीला निर्वान, भेद कोइ बिरला जानै।
सब जग भरमें डार, मूल कोइ बिरला माने।।
मूल नाम सत पुरुष का, पुहुप द्वीपमें बास।
सतगुरु मिलैं तो पाइये, पूरन प्रेम बिलास।।19।।
नाम सनेही होय, दूत जम निकट न आवै।
परमतत्त्व पहिचानि, सत्त साहेब गुन गावै।।
अजर अमर विनसे नहीं, सुखसागरमें बास।
केवल नाम कबीर है, गावे धनिधर्मदास।।20।।

भावार्थ :- धर्मदास जी कहते हैं कि संसार में गुरुओं की कमी नहीं। मान बड़ाई, स्वार्थ के लिए गुरु बन कर अपने सिर पर भार धर रहे हैं। सार शब्द जब तक प्राप्त नहीं होता वह गुरु नरक में जाएगा। जिसे गुरुदेव जी ने नाम-दान देने की अनुमति नहीं दे रखी तथा अपने आप गुरु बन कर नाम देता है वह काल का दूत है। काल के मुख में ले जाएगा। परमात्मा का मुख्य नाम एक ही है उसका भेद किसी बिरले को है। बाकी सब डार (देवी-देवताओं, ब्रह्मा, विष्णु, महेश, माता, ब्रह्म) पर ही लटक रहे हैं।

समै – कबीर, वेद हमारा भेद है, हम नहीं वेदों माहिं।
जौन वेद में हम रहैं, वो वेद जानते नाहीं।

भावार्थ :- कबीर परमेश्वर जी ने धर्मदास जी को बताया कि चारों वेदों में मुझ कबीर परमात्मा का भेद यानि ज्ञान है, परंतु मेरे पाने की विधि वेदों में नहीं है। जिस सूक्ष्म पाँचवें वेद से मेरी प्राप्ति होती है, उसका ज्ञान चारों वेदों (ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद तथा अथर्ववेद) में नहीं है।

रमैनी 36 -

घर घर होय पुरुषकी सेवा। पुरुष निरंजन कहे न भेवा।।
ताकी भगति करे संसारा। नर नारी मिल करें पुकारा।।
सनकादिक नारद मुख गावें। ब्रह्मा विष्णु महेश्वर ध्यावें।
मुनी व्यास पारासर ज्ञानी। प्रहलाद और बिभीषण ध्यानी।।
द्वादस भगत भगती सो रांचे। दे तारी नर नारी नाचे।।
जुग जुग भगतभये बहुतेरे। सबे परे काल के घेरे।।
काहू भगत न रामहिं पाया। भगती करत सर्व जन्म गंवाया।।

भावार्थ :- सर्व प्राणी भगवान की साधना करते हैं, परंतु काल प्रभु यानि ज्योति निरंजन किसी को भी पूर्ण परमात्मा के भेद नहीं देता। संसार के नर-नारी, सनक, सनन्दन, सनातन तथा सन्त कुमार तथा नारद जी व्यास जी, उनके पिता ऋषि परासर जी, प्रहलाद तथा मुनिन्द्र ऋषि जो स्वयं परमात्मा कबीर जी ही थे। उनके मिलने से पहले विभीषण जैसे ध्यान लगाने वाले बारह भक्त विशेष थे। वे तथा सर्व नर-नारी नाच-कूदकर तालियाँ बजा-बजाकर काल साधना करते थे। अनेक भक्त हो चुके हैं। सब काल साधना करके जन्म नष्ट कर रहे हैं। ब्रह्मा, विष्णु, महेश भी भजन करते हैं, परंतु किसी को भी पूर्ण परमात्मा (राम) नहीं मिला। काल साधना करके जन्म खो दिया।

(कबीर पंथी शब्दावली के पष्ठ नं. 279, 294, 305 व 498 से सहाभार)

सुकंत नाम अगुवा भये, सत्तनामकी डोर।
मूल शब्द पर बैठिके, निरखो वस्तू अंजोर।।
साहब कबीर कहि दीहल, सुन सुकंत चितलाय।
पुहुप दीप पर हंस है, बहुर न आवे जाय।।26।।
अगम चरित चेतावनी, अधर अनूपम धाम।
अजर अमर है सोई, सेवही निर्गुन नाम।।
मूल बांध गढ साजहू, आपा मेट गढ लेहु।
गुरुके शब्द गढ तोरहू, सत्त शब्द मन देहु।।
सत्तनाम है सबते न्यारा। निर्गुन सर्गुन शब्द पसारा।।
निर्गुन बीज सर्गुन फल फूला। साखा ज्ञान नाम है मूला।।8।।
मूल गहेते सब सुख पावै। डाल पातमें सर्वस गँवावै।।
सतगुरु कही नाम पहिचानी। निर्गुन सर्गुन भेद बखानी।।9।।
दोहा – नाम सत्त संसारमें, और सकल है पोच।
कहना सुनना देखना, करना सोच असोच।।3।।
सबही झूठ झूठ कर जाना। सत्त नामको सत कर माना।।
निस बासर इक पल नहिं न्यारा। जाने सतगुरु जानन हारा।।10।।
सुरत निरत ले राखै जहवाँ। पहुँचै अजर अमर घर तहवाँ।।
सत्तलोकको देय पयाना। चार मुक्ति पावै निर्वाना।।11।।
दोहा – सतलोकै सब लोक पति, सदा समीप प्रमान।
परमजोतसो जोत मिलि, प्रेम सरूप समान।।5।।
अंस नामतें फिर फिर आवै। पूर्ण नाम परमपद पावै।।
नहिं आवै नहिं जाय सो प्रानी। सत्यनामकी जेहि गति जानी।।12।।
सत्तनाममें रहै समाई। जुग जुग राज करै अधिकाई।।
सतलोकमें जाय समाना। सत पुरुषसों भया मिलाना।।13।।
हंस सुजान हंसही पावा। जोग संतायन भया मिलावा।।
हंस सुघर दरस दिखलावा। जनम जनमकी भूख मिटावा।।14।।
सुरत सुहागिन भइ आगे ठाढी। प्रेम सुभाव प्रीति अति बाढी।।
पुहुपदीपमें जाय समाना। बास सुवास चहूँ दिस आना।।15।।
दोहा – सुख सागर सुख बिलसई, मानसरोवर न्हाय।
कोट काम–सी कामिनी, देखत नैन अघाय।।6।।

सुरति नाम सुनै जब काना। हंसा पावै पद निर्बाना।।
अब तो कृपा करी गुरु देवा। तातें सुफल भई सब सेवा।।16।।
नाम दान अब लेय सुभागी। सतनाम पावै बड़ भागी।
मन बचन कर्म चित्त निश्चय राखै। गुरुके शब्द अमीरस चाखै।।17।।
आदि अंत वहँ भेदै पावै। पवन आड़में ले बैठावै।।
सब जग झूठ नाम इक साँचा। श्वास श्वासमें साचा राचा।।18।।
झूठा जान जगत सुख भोगा। साँचा साधू नाम सँजोगा।।
यह तन माटी इन्द्री छारी। सतनाम सांचा अधिकारी।।19।।
नाम प्रताप जुगै जुग भाखी। साध संत ले हिरदे राखी।।
कहँ कबीर सुन धर्मनि नागर। सत्यनाम है जगत उजागर।।20।।

भावार्थ :- कबीर साहेब अपने परम शिष्य धर्मदास जी को समझा रहे हैं कि सतनाम सब नामों से न्यारा है और पूर्ण परमात्मा की साधना से जीव सुखी होगा। (डाल-पत्तों) काल, ब्रह्म तथा तीनों देवताओं (ब्रह्मा, विष्णु, महेश) व देवी-देवताओं की साधना से जीवन व्यर्थ जाएगा। केवल सतनाम व सारनाम से मुक्ति है। बाकी साधना जैसे कहना (कथा करना), सुनना (कान बंद करके धुनि सुनना), सोच (चिन्तन करना), असोच (व्यर्थ) है। एक सतनाम को त्याग कर यह साधना केवल लिपा-पोती है अर्थात् दिखावटी है। अंश नाम (अधूरे मन्त्र) से जीव जन्म-मरण व चौरासी लाख जूनियों में ही भटकता रहेगा। केवल पूर्ण नाम (सतनाम व सारनाम) से जीव मुक्ति पाएगा। फिर पूर्ण गुरु (सुरति नाम सुनै जब काना) अपने शिष्य को सारशब्द प्राप्त करवाएगा। तब यह जीव निर्वाण ब्रह्म अर्थात् पूर्ण परमात्मा को प्राप्त होगा।

(पष्ठ नं. 38-39)

शब्द हमारा आदि का, सुनि मत जाहु सरख।
जो चाहो निज तत्व को, शब्दे लेहु परख।।9।।
शब्द विना सुरति आँधरी, कहो कहाँको जाय।
द्वार न पावे शब्द का, फिर फिर भटका खाय।।10।।
शब्द शब्द बहुअन्तरा, सार शब्द मथि लीजे।
कहँ कबीर जहँ सार शब्द नहीं, धिग जीवन सो जीजे।।11।।
सार शब्द पाये बिना, जीवहिं चैन न होय।
फन्द काल जेहि लखि पडे, सार शब्द कहि सोय।।12।।
सतगुरु शब्द प्रमान है, कह्यो सो बारम्बार।
धर्मनिते सतगुरु कहै, नहिं बिनु शब्द उबार।।13।।
धर्मनि सार भेद अव खोलौं। शब्दस्वरूपी घटघट बोलौं।।
शब्दहिं गहे सो पंथ चलावै। बिना शब्द नहिं मारग पावै।।
प्रगटे वचन चूरामनि अंशू। शब्द रूप सब जगत प्रशंसू।।
शब्दे पुरुष शब्द गुरुराई। विना शब्द नहिं जिवमुकताई।।
जेहिते मुक्त जीव हो भाई। मुकतामनि सो नाम कहाई।।

भावार्थ :- कबीर साहेब ने कहा कि जो सारनाम आपको दिया जाता है, यही नाम सदा का है परंतु काल भगवान ने इसे छुपा रखा है। अब इस नाम को सुनकर खिसक (नाम त्याग मत जाना) मत जाना। यह न मान लेना कि यह कैसा आदि नाम यानि सारनाम है। विश्वास करना

मेरा नाम आदि का है। यह सारनाम है। इसके पश्चात् आपको सार शब्द प्राप्त कराया जाएगा। यदि सार शब्द प्राप्त नहीं हुआ तो उसका जीवन धिक्कार है और जो मनमुखी गुरु बने फिरते हैं वे नरक के भागी होंगे। जिस नाम से जीव मुक्त होते हैं उसको मुक्तामनी अर्थात् जीव मुकताने वाली मणी (जड़ी) कहते हैं, वही सार नाम कहलाता है। भावार्थ है कि जिस सारनाम से जीव की मुक्ति हो उसे मुक्ता मणी समझो।

ऊपर के शब्दों में साहेब कबीर प्रमाण दे रहे हैं कि यदि सार शब्द गुरु जी से प्राप्त नहीं किया उसका जन्म धिक्कार है। सार नाम को सतसुकत नाम भी कहते हैं। वह पूर्ण गुरु के पास ही होता है जिसको गुरु ने आगे नाम दान की आज्ञा दे रखी हो। नाम-नाम में बहुत अन्तर है। सत्यनाम का जहाँ तक काम है वह अपने स्थान पर सही है। केवल सत्यनाम से जीव का काल लोक से बन्धन नहीं छूटेगा, जब तक सार शब्द नहीं मिलेगा। सत्यनाम के जाप (अभ्यास) बिना सारनाम काम नहीं करेगा।

जैसे हैंड पम्प (पानी का नलका) लगाना है। उसकी तीन स्थिति हैं। प्रथम पाईप तथा बोकी (पाईप को जमीन तक पहुँचाने का यन्त्र) खरीद कर लाने के लिए पैसे वह नाम है - ब्रह्म गायत्री मन्त्र। जिसकी कमाई से ''सत्यनाम'' की प्राप्ति होवैगी। वही साहेब कबीर व गरीबदास जी ने अपनी वाणी में प्रमाणित किया है --

ज्ञान सागर अति उजागर, निर्विकार निरंजनं।
ब्रह्मज्ञानी महाध्यानी, सत सुकत दुःख भंजनं।1।
मूल चक्र गणेश बासा, रक्त वर्ण जहां जानिये।
किलियं जाप कुलीन तज सब, शब्द हमारा मानिये।2।
स्वाद चक्र ब्रह्मादि बासा, जहां सावित्री ब्रह्मा रहैं।
ओ३म जाप जपंत हंसा, ज्ञान जोग सतगुरु कहैं।3।
नाभि कमल में विष्णु विशम्भर, जहां लक्ष्मी संग बास है।
हरियं जाप जपन्त हंसा, जानत बिरला दास है।4।
हृदय कमल महादेव देवं, सती पार्वती संग है।
सोहं जाप जपंत हंसा, ज्ञान जोग भल रंग है।5।
कंठ कमल में बसै अविद्या, ज्ञान ध्यान बुद्धि नासही।
लील चक्र मध्य काल कर्मम्, आवत दम कुं फांसही।6।
त्रिकुटी कमल परम हंस पूर्ण, सतगुरु समरथ आप है।
मन पौना सम सिंध मेलो, सुरति निरति का जाप है।7।
सहंस कमल दल आप साहिब, ज्यूं फूलन मध्य गन्ध है।
पूर रह्या जगदीश जोगी, सत् समरथ निर्बन्ध है।।8।।

भावार्थ :- यह मानसिक जाप गुरु जी से लेकर करना होता है। इसकी कमाई से नलका लगाने का सामान पाईप व बोकी प्राप्त होगा। फिर (सत्यनाम का जाप करना है) स्वाँस-उस्वाँस रूपी बोकी एक बार ऊपर उठाते हैं फिर बोकी को जमीन में मारते हैं। ऐसा बार-2 करते रहते हैं तथा पाईप को साथ-2 नीचे पहुँचाते रहते हैं। जब पानी तक पहुँच गए फिर रूक जाते हैं। यहाँ तक सत्यनाम का काम है। यदि ऊपर पानी निकालने वाली मशीन (हैंड पम्प) नहीं लगाई तो वह पानी तक पहुँचाया हुआ पाईप व्यर्थ है। यदि सत्यनाम का जाप मिला हुआ वह भी पूर्ण गुरु द्वारा कुछ काम अवश्य करेगा परंतु पूर्ण लाभ (उद्देश्य) सार नाम से प्राप्त होगा।

गरीब, सतगुरु सोहं नाम दे, गुझ बिरज विस्तार। बिन सोहं सिझे नहीं, मूल मन्त्र निजसार।।

मूल मन्त्र यहाँ पर सार नाम को कहा है तथा सोहं के बिना सार शब्द भी कामयाब नहीं है। दसवीं (मैट्रिक) किए बिना आगे वाली कक्षा में प्रवेश नहीं मिलता। इसलिए कबीर साहेब कहते हैं --

कबीर सोहं सोहं जप मुए, वृथा जन्म गवाया। सार शब्द मुक्ति का दाता, जाका भेद नहीं पाया।।

कबीर जो जन होए जौहरी, सो धन ले विलगाय। सोहं सोहं जपि मुए, मिथ्या जन्म गंवाया।।

कबीर कोटि नाम संसार में, इनसे मुक्ति न होय। आदि नाम (सारनाम) गुरु जाप है, बुझै बिरला कोय।।

विशेष प्रमाण के लिए कबीर पंथी शब्दावली पष्ठ नं. 51

ऊँ–सोहं, सोहं सोई। ऊँ – सोहं भजो नर लोई।।

भावार्थ :- धर्मदास को सत्य शब्द (सत्यनाम) सुनाया सतगुरु सत्य कबीर। कबीर साहेब ने धर्मदास को सत्य शब्द (सत्यनाम) दिया वह 'ऊँ-सोहं' है तथा इसका भजन करना। फिर बाद में सार शब्द दिया और कहा कि ''धर्मदास तोहे लाख दोहाई। सार शब्द कहीं बाहर न जाई।।'' यह इतना कीमती नाम है कि किसी काल के उपासक के हाथ न लग जाए। इसलिए गरीबदास जी ने कहा है -

गरीब, सोहं शब्द हम जग में लाए, सार शब्द हम गुप्त छुपाए।।

कबीर साहेब कहते हैं - इसी शब्द रमैणी में -

शब्द–शब्द बहु अंतरा, सार शब्द मथि लीजै। कहैं कबीर जहाँ सार शब्द नहीं, धिक जीवन सो जीजै।।

।।शब्द।।

संतो शब्दई शब्द बखाना।। टेक।। शब्द फांस फँसा सब कोई शब्द नहीं पहचाना।।

प्रथमहिं ब्रह्म स्व इच्छा ते पांचौ शब्द उचारा। सोहं, निरंजन, रंरकार, शक्ति और ओंकारा।।

पांचौ तत्व प्रकति तीनों गुण उपजाया। लोक द्वीप चारों खान चौरासी लाख बनाया।।

शब्दइ काल कलंदर कहिये शब्दइ भर्म भुलाया। पांच शब्द की आशा में सर्वस मूल गंवाया।।

शब्दइ ब्रह्म प्रकाश भैंट के बैठे मूंदे द्वारा। शब्दइ निरगुण शब्दइ सरगुण शब्दइ वेद पुकारा।।

शुद्ध ब्रह्म काया के भीतर बैठा एक स्थाना। ज्ञानी योगी पंडित औ सिद्ध शब्द में उरझाना।।

पाँचइ शब्द पाँच हैं मुद्रा काया बीच ठिकाना। जो जिही का आराधन करता सो तिहि करत बखाना।।

शब्द निरंजन चांचरी मुद्रा है नैनन के माँही। ताको जाने गोरख योगी महा तेज तप माँही।।

शब्द ओंकार भूचरी मुद्रा त्रिकुटी है स्थाना। व्यास देव ताहि पहिचाना चांद सूर्य तिहि जाना।।

सोहं शब्द अगोचरी मुद्रा भंवर गुफा स्थाना। शुकदेव मुनी ताहि पहिचाना सुन अनहद को काना।।

शब्द रंरकार खेचरी मुद्रा दसवें द्वार ठिकाना। ब्रह्मा विष्णु महेश आदि लो रंरकार पहिचाना।।

शक्ति शब्द ध्यान उनमुनी मुद्रा बसे आकाश सनेही। झिलमिल झिलमिल जोत दिखावे जाने जनक विदेही।।

पाँच शब्द पाँच हैं मुद्रा सो निश्चय कर जाना। आगे पुरुष पुरान निःअक्षर तिनकी खबर न जाना।।

नौ नाथ चौरासी सिद्धि लो पाँच शब्द में अटके। मुद्रा साध रहे घट भीतर फिर ओंधे मुख लटके।।

पाँच शब्द पाँच है मुद्रा लोक द्वीप यमजाला। कहैं कबीर अक्षर के आगे निःअक्षर उजियाला।।

भावार्थ :- जैसा कि इस शब्द ''संतो शब्दई शब्द बखाना'' में लिखा है कि सभी संत जन शब्द की महिमा गाते हैं। महाराज कबीर साहिब ने बताया है कि शब्द सतपुरुष का भी है जो कि सतपुरुष का प्रतीक है व निरंजन (काल) का प्रतीक भी शब्द ही है। जैसे शब्द ज्योति निरंजन यह चांचरी मुद्रा को प्राप्त करवाता है, इसको गोरख योगी ने बहुत अधिक तप करके प्राप्त किया जो कि आम (साधारण) व्यक्ति के बस की बात नहीं है और फिर गोरख नाथ काल तक ही साधना

करके सिद्ध बन गए। मुक्त नहीं हो पाए। जब कबीर साहिब ने सार नाम दिया तब काल से छुटकारा गोरख नाथ जी का हुआ। इसीलिए ज्योति निरंजन नाम का जाप करने वाले काल जाल से नहीं बच सकते अर्थात् सत्यलोक नहीं जा सकते। शब्द ओंकार (ओ३म) का जाप करने से भूंचरी मुद्रा की स्थिति में साधक आ जाता है। जो कि वेद व्यास ने साधना की और काल जाल में ही रहा। सोहं नाम के जाप से अगोचरी मुद्रा की स्थिति हो जाती है और काल के लोक में बनी भंवर गुफा में पहुंच जाते हैं। जिसकी साधना सुखदेव ऋषि ने की और केवल स्वर्ग तक पहुँचा। शब्द रंरकार खैचरी मुद्रा से दसमें द्वार (सुष्मणा) तक पहुंच जाते हैं। ब्रह्मा विष्णु महेश तीनों ने ररंकार को ही सत्य मान कर काल के जाल में उलझे रहे। शक्ति (श्रीयम्) शब्द ये उनमनी मुद्रा को प्राप्त करवा देता है जिसको राजा जनक ने प्राप्त किया परंतु मुक्ति नहीं हुई। कई संतों ने पांच नामों में शक्ति की जगह सत्यनाम जोड़ दिया है। सत्यनाम कोई जाप नहीं है। ये तो सच्चे नाम की तरफ इशारा है जैसे सत्यलोक को सच्च खण्ड भी कहते हैं ऐसे ही सत्यनाम व सच्चा नाम है। सत्यनाम जाप करने का नहीं है। अकाल मूरत, शब्द स्वरूपी राम, सतपुरुष ये नाम मुक्ति प्राप्त करने के नहीं हैं क्योंकि ये तो पूर्ण ब्रह्म परमात्मा के पर्यायवाची शब्द हैं जैसे अकाल मूरत वह परमात्मा जिसका काल न हो यानि अविनाशी। सतपुरुष वह सच्चा परमात्मा जिसका नाश न हो यानि अविनाशी। शब्द स्वरूपी राम वह परमात्मा जिसका वास्तविक रूप शब्द है और शब्द खण्ड नहीं होता व नाश में नहीं आता यानि अविनाशी। उस परमात्मा को जो अविनाशी है जिसको शब्द स्वरूपी राम, अकाल मूरत व सतपुरुष आदि नामों से जाना जाता है, को तो पाना है। यह तो इस प्रकार है जैसे जल के तीन पर्यायवाची नाम जैसे - जल-पानी-नीर। ऐसे कहते रहने से जल प्राप्त नहीं हो सकता उसके लिए हैंड पम्प लगाना पड़ता है तब पानी प्राप्त होता है। इसी प्रकार अकाल मूरत परमात्मा को प्राप्त करने की विधि भिन्न है। वे जाप करने के मंत्र भिन्न हैं जिनके विषय में कहा है कि *''सोई गुरू पूरा कहावै, जो अखर (अक्षर) का नाम बतावै''। श्री नानक जी ने कहा है कि ''जे तू पढ़िया पंडित बिन दोई अखर बिन दोई नावां।'' कबीर जी ने कहा है कि ''कबीर अखर दोई भाख, होगा खसम तो लेगा राख।'' दो अखर सतनाम में हैं जिनमें एक ॐ (ओम्) नाम है, दूसरा केवल उपदेशी को बताया जाता है। श्री नानक जी ने भी सतनाम के दूसरे मंत्र को गुप्त रखा था। जैसे वे कहते थे ''एक ओंकार'' तथा लिखते थे ''1 ॐ''। जो यह 1 है, यह सतनाम के दूसरे अक्षर की ओर संकेत है। गीता अध्याय 17 श्लोक 23 में ''ॐ'' तो स्पष्ट लिखा है, परंतु दूसरा तथा तीसरा मंत्र सांकेतिक लिखा है।*

।। सार शब्द बिना सतनाम भी व्यर्थ।।

उसके लिए सत्यनाम यानि सच्चा नाम देने वाला गुरु मिले और श्वांस द्वारा अजपा-जाप करने को कहे। श्वांस उश्वांस रूपी बोकी लगे और फिर उसमें सार नाम रूपी नलका लगाया जाए तो पानी प्राप्त होता है अर्थात् वह अकाल मूर्ति (सतपुरुष) प्राप्त होता है। कई भक्तों ने बताया कि गरीबदास जी महाराज के अनुयाई संत भी केवल ओ३म-सोहं या केवल सोहं या ओ३म भागवदे वासुदेवाय नमः आदि-आदि नाम देते हैं जो कि मुक्ति के नहीं हैं। क्योंकि गरीबदास जी महाराज जी ने कहा है कि :--

सोहं अक्षर खण्ड है भाई, तातें निःक्षर रहो लौ लाई। सोहं में थे ध्रु प्रहलादा, ओ३म सोहं वाद विवादा।।

अर्थात् सोहं मन्त्र का जाप करने वाले प्रहलाद भी मुक्त नहीं हुए। जैसा कि शब्द 'कोई है रे परले पार का, भेद कहै झनकार का' में लिखा है कि वारिही (अंदर वाले किनारे) यानि काल लोक

में ही रहे। बन्दी छोड़ गरीबदास जी महाराज अपनी वाणी में लिखते हैं कि :

गरीब, सोहं ऊपर और है, सत सुकृत एक नाम। सब हंसों का बंस है, नहीं बसती नहीं ठाम।।
गरीब, सतगुरु सोहं नाम दे, गुझ बीरझ विस्तार। बिन सोहं सीझे नहीं, मूल मन्त्र निजसार।।
गरीब, नामा छीपा ओ३म् तारी, पीछे सोहं भेद विचारी। सार शब्द पाया जद् लोई, आवागवन बहुर न होई।।
गरीब, सोहं शब्द हम जग में लाए, सार शब्द हम गुप्त छिपाए।।

महाराज गरीबदास जी ने बताया कि सोहं शब्द के ऊपर एक अन्य कल्याणकारक यानि मोक्षदायक नाम है जिससे सर्व का उद्धार संभव है। पूर्ण गुरू सोहं नाम देकर उसका गुप्त गूढ़ भेद विस्तार से बताता है। सारनाम भी सोहं के बिना लाभ नहीं देता। इसलिए पूर्ण संत ही सर्व नाम दान करके स्मरण की विधि बताता है। जैसे कि नामदेव संत ओ३म् जाप करते थे इसके बाद कबीर साहिब की कृप्या से सोहं का ज्ञान हुआ फिर भी मुक्ति नहीं होनी थी। जब सार नाम कबीर साहिब ने दिया तब उसकी मुक्ति हुई। फिर नामदेव जी ने खुशी में यह शब्द गाया --

।। नामदेव जी की वाणी में सतनाम का प्रमाण।।

एजी–एजी साधो, सार शब्द मोहे पाया।
कलह कल्पना मन की मेटी, भय और कर्म नशाया।।टेक।।
रूप न रेख कछु ना वाके, सोहं ध्यान लगाया।
अजर अमर अविनाशी देखा, सिंधु सरोवर न्हाया।।1।।
शब्द ही शब्द भया उजियारा, सतगुरु भेद बताया।
अपने को आपे में पाया, न कहीं गया न आया।।2।।
ज्यों कामनी कंठ का हीरा, आभूषण विसराया।
संग की सहेली भेद बताया, जीव का भरम नशाया।।3।।
जैसे मंग नाभी कस्तूरी, बन–बन डोलत धाया।
नासा श्वांस भई जब आगे, पलट निरंतर आया।।4।।
कहा कहूं वा सुख की महिमा, गूंगे को गुड़ खाया।
'नामदेव' कहै गुरु कृपा से, ज्यों का त्यों दर्शाया।।5।।
कबीर, सोहं सोहं जप मुवे वृथा जन्म गवांया।
सार शब्द मुक्ति का दाता, जाका भेद नहीं पाया।।

भावार्थ :- श्री नामदेव संत जी ने खुशी जताई है कि कहा है कि हे साध संगत! मैंने गुरू जी से सारशब्द प्राप्त कर लिया है। मन में जो भी शंका व कल्पनाऐं थी कि परमात्मा कैसे मिलेगा? वह अब सब समाप्त हो गई हैं। सारनाम तथा सतनाम के जाप से सर्व पापकर्म नष्ट हो गए हैं। मोक्ष न होने का भय था, वह भी मिट गया है क्योंकि पूर्ण गुरू तथा पूर्ण मंत्र मिल गए हैं। अब मोक्ष में कोई संशय नहीं है। सतगुरू जी ने साधना का गूढ़ भेद बता दिया है। कहीं बाहर भटकने की आवश्यकता नहीं है। अपने मानव शरीर में ही भक्ति करने से परमात्मा प्राप्त होता है। सतगुरू ने मानव को उसी के श्वासों द्वारा स्मरण करने का भेद बताकर अनमोल मोक्ष रूपी आभूषण मिला दिया जैसे एक युवती ने स्वर्ण का आभूषण गले में पहन रखा था। भूल गई थी कि मेरा गहना मेरे ही गले में है। वह उसे खोज रही थी। दूसरी सहेली (मित्र) ने बताया कि जिस आभूषण को खोज रही है, वह तेरे गले में है। इसी प्रकार सतगुरू जी ने श्वासों के जाप का महत्व बताकर कृतार्थ किया

है। अन्य व्यक्ति पूछ रहे हैं कि सतनाम व सारनाम को श्वांस से जाप करने में कैसा आनंद आता है। इसके उत्तर में संत नामदेव जी ने अपने सतगुरू कबीर जी से प्राप्त ज्ञान के द्वारा बताया कि जैसे गूंगा व्यक्ति गुड़ खा रहा था। वह उसके आनंद को बोलकर नहीं बता पा रहा था, केवल खुशी से सिर-गर्दन हिला-हिलाकर आनंद प्रकट कर रहा था। इसी प्रकार श्वांस के स्मरण का आनंद सतनाम-सारनाम प्राप्त भक्त-भक्तमति ही महसूस कर सकते हैं, बताया नहीं जा सकता। अन्य उदाहरण दिया है कि जैसे किसी-किसी हिरण की नाभि में कस्तूरी होती है। उससे सुगंध निकलती है। हिरण जब घास चरता है तो उसके श्वासों द्वारा वह महक घास व पथ्वी से टकराकर हिरण के द्वारा लिए गए श्वांस में महसूस होती है। भूलवश वह हिरण समझता है कि यह महक घास के अंदर से आ रही है। वह कस्तूरी को घास में खोजने लगता है। इधर-उधर घास को सूंघता फिरता है। अंत में थककर बैठ जाता है। उसको फिर भी वह महक आ रही होती है। तब वह भटकना छोड़कर अपने श्वासों से अपने अंदर की कस्तूरी की सुगंध का आनंद लेता है। इसी प्रकार पूर्ण सतगुरू श्वांसों का स्मरण बताकर तत्वज्ञान समझाकर भक्त-भक्तमति का नकली संतों व आन-उपासना के लिए भटकना समाप्त कर देता है। मोक्ष प्राप्त करा देता है।

।। गलत नाम मूर्खों की उपासना।।

कई भक्तों ने बताया कि हमारे गुरुदेव जी केवल राधा स्वामी नाम देते हैं जबकि यह नाम कबीर साहिब ने कहीं भी अपने शास्त्र में वर्णन नहीं कर रखा। न ही किसी अन्य शास्त्र (वेद-गीता जी आदि) में प्रमाण है। इसलिए शास्त्र से विपरीत साधना होने से नरक प्राप्ति है। वाणी है :--

कबीर, दादू धारा अगम की, सतगुरु दई बताय। उल्ट ताही सुमरण करै, स्वामी संग मिल जाय।।

टिप्पणी :-- कहते हैं कि कबीर साहिब ने दादू साहिब को कहा कि धारा शब्द का उल्टा *राधा बनाओ और स्वामी के साथ मिला लो यह राधा स्वामी मन्त्र हो गया। प्रथम तो यह वाणी दादू साहिब की है न कि कबीर साहिब की। और इस साखी का अर्थ बनता है कि दादू साहिब कहते हैं कि मेरे सतगुरु (कबीर साहिब) ने मुझे तीन लोक से आगे (अगम) की धारा (विधि) बताई कि तीन लोक की साधना को छोड़कर (उल्ट कर) जो सत्यनाम व सारनाम दिया है वह आपको सतपुरुष से मिला देगा। इसीलिए भक्तजनों मनुष्य जन्म का मिलना अति दुर्लभ है। इसको अनजान साधनाओं में नहीं खोना चाहिए। पूरे गुरु की तलाश करें जो कि आज के दिन मेरे पूज्य गुरुदेव स्वामी रामदेवानन्द जी महाराज की कप्या से यह दोनों मन्त्र उपलब्ध हैं जिनकी विधि पूर्वक गुरु मर्यादा में रह कर साधना (जाप) करने से बड़े सहजमय सतपुरुष प्राप्ति हो जाती है।*

।। काल के जाल का वर्णन।।

कबीर पंथी शब्दावली (पष्ठ नं. 550, 551, 557) से सहाभार

रमैनी 61 – निरगुन पुरुष निरंजन देवा। सब जग करे ताहिकी सेवा।।
अपन अपन मत कीन्ह बिचारी। बात न बूझै कोई हमारी।।
बैरागी कहे लेउ बैरागा। ब्रह्मचारी तीरथ व्रत लागा।।
संन्यासी सर्वनास कराया। योग जुगति कर प्रान चढाया।
जिंदा पड़ा कुरानके फंदा। भा छानबे झूठ पाखंडा।
भेष धरी यहि गुरुवा दिखलावे। आप गुरु होय जगत बतावे।।

भावार्थ :- कबीर परमात्मा जी ने बताया है कि काल ब्रह्म यानि ज्योति निरंजन अव्यक्त

रहता है। इसलिए उसे निर्गुण (निराकार) मान रखा है। सर्व जगत उसी की भक्ति कर रहा है। किसी को यथार्थ अध्यात्म ज्ञान नहीं है। सब अपना-अपना मन यानि विधान बताते हैं। कोई भी मेरे ज्ञान को नहीं सुनना चाहता। जो भी जैसी साधना कर रहा है, वह अन्य को उसी के करने की राय देता है। जैसे वैरागी कहते हैं कि सब वैराग्य धारण करो। जो ब्रह्मचारी हैं, वे तीर्थ-व्रत को महत्व देते हैं। सन्यासियों ने समाधि लगाने का अभ्यास करके अपने जीवन को नष्ट कर लिया। मुसलमान धर्म के जिंदा संत कुरान में फँसकर अधूरी साधना कर रहे हैं। सब पंथों के अुनयाई भिन्न-भिन्न वेशभूषा पहनकर तथा अन्य भिन्न पहचान बनाकर अपने को सत्य साधक मानते हैं। उनके गुरूजन भी उसी प्रकार की वेशभूषा धारण करके अपने पंथ का प्रचार करके भोले जीवों को अपने जाल में फँसाकर काल ब्रह्म का आहार तैयार कर रहे हैं। पूर्ण संत बिना मोक्ष नहीं हो सकता।

।। कबीर साहेब का शब्द ।।

कर नैनों दीदार महलमें प्यारा है ।। टेक ।।
काम क्रोध मद लोभ बिसारो, शील सँतोष क्षमा सत धारो ।
मद मांस मिथ्या तजि डारो, हो ज्ञान घोडै असवार, भरम से न्यारा है ।।1 ।।
धोती नेती बस्ती पाओ, आसन पदम जुगतसे लाओ ।
कुम्भक कर रेचक करवाओ, पहिले मूल सुधार कारज हो सारा है ।।2 ।।
मूल कँवल दल चतूर बखानो, किलियम जाप लाल रंग मानो ।
देव गनेश तहँ रोपा थानो, रिद्धि सिद्धि चँवर ढुलारा है ।।3 ।।
स्वाद चक्र षटदल विस्तारो, ब्रह्म सावित्री रूप निहारो ।
उलटि नागिनी का सिर मारो, तहाँ शब्द ओंकारा है ।।4 ।।
नाभी अष्ट कमल दल साजा, सेत सिंहासन बिष्णु बिराजा ।
हरियम् जाप तासु मुख गाजा, लछमी शिव आधारा है ।।5 ।।
द्वादश कमल हृदयेके माहीं, जंग गौर शिव ध्यान लगाई ।
सोहं शब्द तहाँ धुन छाई, गन करै जैजैकारा है ।।6 ।।
षोड्श कमल कंठ के माहीं, तेही मध बसे अविद्या बाई ।
हरि हर ब्रह्म चँवर ढुराई, जहँ श्रीयम् नाम उचारा है ।।7 ।।
तापर कंज कमल है भाई, बग भौंरा दुइ रूप लखाई ।
निज मन करत वहाँ ठकुराई, सो नैनन पिछवारा है ।।8 ।।
कमलन भेद किया निर्वारा, यह सब रचना पिंड मँझारा ।
सतसँग कर सतगुरु शिर धारा, वह सतनाम उचारा है ।।9 ।।
आँख कान मुख बन्द कराओ, अनहद झिंगा शब्द सुनाओ ।
दोनों तिल इक तार मिलाओ, तब देखो गुलजारा है ।।10 ।।
चंद सूर एक घर लाओ, सुषमन सेती ध्यान लगाओ ।
तिरबेनीके संधि समाओ, भौर उतर चल पारा है ।।11 ।।
घंटा शंख सुनो धुन दोई, सहस्र कमल दल जगमग होई ।
ता मध करता निरखो सोई, बंकनाल धस पारा है ।।12 ।।
डाकिनी शाकनी बहु किलकारे, जम किंकर धर्म दूत हकारे ।
सत्तनाम सुन भागे सारें, जब सतगुरु नाम उचारा है ।।13 ।।

गगन मँडल बिच उर्धमुख कुइया, गुरुमुख साधू भर भर पीया।
निगुरो प्यास मरे बिन कीया, जाके हिये अँधियारा है।।14।।
त्रिकुटी महलमें विद्या सारा, धनहर गरजे बजे नगारा।
लाल बरन सूरज उजियारा, चतूर दलकमल मंझार शब्द ओंकारा है।।15।।
साध सोई जिन यह गढ लीनहा, नौ दरवाजे परगट चीन्हा।
दसवाँ खोल जाय जिन दीन्हा, जहाँ कुलुफ रहा मारा है।।16।।
आगे सेत सुन्न है भाई, मानसरोवर पैठि अन्हाई।
हंसन मिलि हंसा होई जाई, मिलै जो अमी अहारा है।।17।।
किंगरी सारंग बजै सितारा, क्षर ब्रह्म सुन्न दरबारा।
द्वादस भानु हंस उँजियारा, षट दल कमल मँझार शब्द ररंकारा है।।18।।
महा सुन्न सिंध बिषमी घाटी, बिन सतगुरु पावै नहिं बाटी।
व्याघर सिहं सरप बहु काटी, तहँ सहज अचिंत पसारा है।।19।।
अष्ट दल कमल पारब्रह्म भाई, दहिने द्वादश अंचित रहाई।
बायें दस दल सहज समाई, यो कमलन निरवारा है।।20।।
पाँच ब्रह्म पांचों अँड बीनो, पाँच ब्रह्म निःअच्छर चीन्हों।
चार मुकाम गुप्त तहँ कीन्हो, जा मध बंदीवान पुरुष दरबारा है।।21।।
दो पर्वतके संध निहारो, भँवर गुफा तहां संत पुकारो।
हंसा करते केल अपारो, तहाँ गुरन दर्बारा है।।22।।
सहस अठासी दीप रचाये, हीरे पन्ने महल जड़ाये।
मुरली बजत अखंड सदा ये, तँह सोहं झनकारा है।।23।।
सोहं हद तजी जब भाई, सत्तलोककी हद पुनि आई।
उठत सुगंध महा अधिकाई, जाको वार न पारा है।।24।।
षोडस भानु हंसको रूपा, बीना सत धुन बजै अनूपा।
हंसा करत चँवर शिर भूपा, सत्त पुरुष दर्बारा है।।25।।
कोटिन भानु उदय जो होई, एते ही पुनि चंद्र लखोई।
पुरुष रोम सम एक न होई, ऐसा पुरुष दिदारा है।।26।।
आगे अलख लोक है भाई, अलख पुरुषकी तहँ ठकुराई।
अरबन सूर रोम सम नाहीं, ऐसा अलख निहारा है।।27।।
ता पर अगम महल इक साजा, अगम पुरुष ताहिको राजा।
खरबन सूर रोम इक लाजा, ऐसा अगम अपारा है।।28।।
ता पर अकह लोक है भाई, पुरुष अनामि तहां रहाई।
जो पहुँचा जानेगा वाही, कहन सुनन ते न्यारा है।।29।।
काया भेद किया निरुवारा, यह सब रचना पिंड मँझारा।
माया अविगत जाल पसारा, सो कारीगर भारा है।।30।।
आदि माया कीन्ही चतूराई, झूठी बाजी पिंड दिखाई।
अवगति रचना रची अँड माहीं, ताका प्रतिबिंब डारा है।।31।।
शब्द बिहंगम चाल हमारी, कहैं कबीर सतगुरु दई तारी।
खुले कपाट शब्द झनकारी, पिंड अंडके पार सो देश हमारा है।।32।।

(कबीर शब्दावली से लेख समाप्त)

शब्दः-- ''कर नैनों दीदार महल में प्यारा है'' इसमें साहेब कबीर ने काल के जाल का पूरा विवरण दिया है। स्थूल शरीर (पाँच तत्व से बना मनुष्य) को एक टेलिविजन जानो। इसमें चैनल लगे हैं।

	कमल	देवता
1	मूल कमल	गणेश
2	स्वाद चक्र	ब्रह्मा–सावित्री
3	नाभि कमल	विष्णु–लक्ष्मी
4	हृदय कमल	शिव–पार्वती
5	कंठ कमल	अविद्या (प्रकति)

त्रिकुटी दो दल (काला व सफेद रंग) का कमल है। इसे एयरपोर्ट जानों जैसे हवाई अड्डा हो। वहाँ से जहाँ भी जाना है वही जहाज उपलब्ध होगा। चूंकि सर्व संत यहीं से अपना आगे जाने का मार्ग लेते हैं। वहाँ पर परमात्मा (भक्त जिस इष्ट का उपासक है) गुरु का रूप (शब्द स्वरूपी गुरु या शब्द गुरु कहिए) बना कर आता है तथा अपने हंस को अपने साथ ले कर स्वस्थान (स्वलोक) में ले जाता है। यहाँ पर निजमन (पारब्रह्म) रहता है। वह जीव के साथ किसी प्रकार का धोखा नहीं होने देता। जैसे हवाई अड्डे पर जाने से पहले जिस देश में जाना है उसका पासपोर्ट, बीजा व टिकट पहले ही प्राप्त कर लिया जाता है। वहाँ पर जाते ही उसी जहाज में बैठा दिया जाता है। जिसने जिस इष्ट लोक में जाने की तैयारी गुरु बना कर नाम स्मरण करके कर रखी है वह उसी लोक में त्रिकुटी से अपने शब्द गुरु के साथ चला जाता है। इससे आगे सहंस्रार कमल है तथा ज्योति नजर आती है ब्रह्म उपासक इस ज्योति को देख कर अपने धन्य भाग समझते हैं। यहीं तक की जानकारी पतंजलि योग दर्शन व अन्य योगियों का अनुभव है। इससे आगे किसी प्रमाणित शास्त्र में ज्ञान नहीं है। यह काल का प्रथम जाल है।

जिन भक्त आत्माओं को पूर्ण सतगुरु मिल गया, उसने सतसंग सुन कर सतनाम ले लिया। वह इस जाल को समझ गया तथा नाम जपने लग गया।

काल का दूसरा जाल है कि सतलोक, अलख लोक, अगम लोक व अनामी लोक यह सब पूर्णब्रह्म की रचना की झूठी नकल कर रखी है {उसका प्रतिबिम्ब डारा है}। नकली शब्द बना रखे हैं। उनको सुनने का तरीका है आँख-कान-मुख हाथ की उँगलियों से बन्द करके फिर उसमें कानों पर ध्यान लगाओ। एक झींगा कीट होता है वह झीं-झीं की आवाज करता रहता है। उस से मिलती जुलती आवाज है। उसे अनहद शब्द कहते हैं, इसे सुनो।

दूसरी साधना - दोनों आँखों की पुतलियों (सैलियों के निचे) को दबाओ। उसमें से नाना प्रकार का प्रकाश (गुलजारा) दिखाई देगा।

फिर तीसरी साधना बताई - ठण्डा श्वांस चन्द (बांई नाक वाली श्वांस) व सूर (सूर्य) गर्म श्वांस (दांई नाक वाली श्वांस) को इक्ट्ठा करके सुषमना में प्रवेश करो। यह प्राणायाम विधि है। फिर आगे चलो त्रिवैणी पर। यह सब काल रचित है। जब साधक त्रिवैणी पर चले जाते हैं। वहाँ तीन रास्ते होते हैं। दांई ओर सहंस्रार (एक हजार कमल दल) दल वाला कमल है। वह काल (ज्योति निरंजन) का महास्वर्ग है। इसमें घंटा तथा शंख की आवाज होती सुनाई देवेगी तथा फिर झिलमिल-झिलमिल प्रकाश नजर आएगा। वहाँ निराकार रूप में (काल) कर्त्ता रहता है ऐसा साधक मानते हैं परंतु वास्तव में महाब्रह्मा-महाविष्णु व महाशिव रूप में आकार में है। दांई ओर बारह भक्त

काल (ब्रह्म) के हुए हैं। वे वहाँ पर निश्चिंत रहते हैं। उनको महा प्रलय तक मत्यु की चिंता नहीं है। परंतु महा प्रलय में फिर समाप्त हो जाएंगे। काल जब दोबारा सष्टि रचेगा तो फिर चौरासी लाख योनियों में कर्म कष्ट भोगने के लिए चले जाएंगे। जब यह साधक ब्रह्मरन्द्र की ओर चलता है तो वहाँ पर बहुत भयंकर आकंतियाँ वाली स्त्रियों (डाकनी) की व यम दूतों की पूरी फौज रहती है। उस कटक दल (काल सेना) को न तो ऊँ नाम से जीता जा सकता, न किलियम् से, न हरियम् से, न सोहं से, न ही ज्योति निरंजन-रंरकार-ओंकार-सोहं-शक्ति (श्रीयम्) से, न ही राधास्वामी नाम से, न हीं अकाल मूर्त-शब्द स्वरूपी राम या सतपुरुष या अन्य मनमुखी नामों से जीता जा सकता है। वह केवल पूर्ण संत से उपदेश प्राप्त करके सतनाम सच्चा नाम (ऊँ-सोहं) श्वांस के स्मरण करने से उनको तीर से लगते हैं। जिससे वे भाग जाते हैं। रास्ता खाली हो जाता है, ब्रह्मरन्द्र खुल जाता है तथा साधक काल के असली (विराट रूप में जहाँ रहता है) स्वरूप को देख कर उसके सिर पर पैर रखकर ग्यारहवें द्वार [जो काल ने अपने सिर से बन्द कर रखा है जो सतगुरु के सत्यनाम व सारनाम के दबाव से काल का सिर स्वतः झुक जाता है और वह द्वार खुल जाता है। इस प्रकार यह हंस परब्रह्म के लोक] में प्रवेश कर जाता है। वहाँ काल की माया का दबाव नहीं है। उसके बाद अपने आप केवल सोहं शब्द व सारनाम स्मरण शुरु हो जाता है। ऊँ का जाप उच्चारण नहीं होता। चूंकि वहाँ सूक्ष्म शरीर छूट जाता है अर्थात् ओ३म मंत्र की कमाई ब्रह्म (काल) को छोड़ दी जाती है। कारण व महाकारण शरीर भी सारनाम के स्मरण से (जो केवल सुरति निरति से शुरु हो जाता है) समाप्त हो जाते हैं। उस समय केवल कैवल्य शरीर रह जाता है। उस समय जीव की स्थिति बारह सूर्यों के प्रकाश के समान हो जाती है, इतना तेजोमय हो जाता है। सतगुरु वहाँ पूछते हैं कि हे हंस आत्मा! आपका किसी जीव में, वस्तु में, सम्पत्ति में मोह तो नहीं है। यदि है तो फिर वापिस काल लोक में जाना होगा। परंतु उस समय यह जीवात्मा काल का पूर्ण जाल पार कर चुकी होती है। वापिस जाने को आत्मा नहीं मानती। तब कह देती है कि नहीं सतगुरु जी, अब उस नरक में नहीं जाऊँगा। तब सतगुरु उस हंस को अमंत मानसरोवर में स्नान करवाते हैं। उस समय उस हंस का कैवल्य शरीर तथा सर्व आवरण समाप्त होकर आत्म तत्व में आ जाता है। यह मानसरोवर परब्रह्म के लोक तथा सतलोक के बीच में बने सुन्न स्थान में है जहाँ से भंवर गुफा प्रारम्भ होती है। उस भंवर गुफा में आत्मा का स्वरूप 16 सूर्यों जितना तेजोमय हो जाता है तथा बारहवें द्वार को पार कर सत्यलोक में प्रवेश कर सदा पूर्णब्रह्म के आनन्द को पाती है। यह पूर्ण मुक्ति है।

यह आत्मा भूल कर भी वापिस काल के जाल में नहीं आती। जैसे बच्चे का एक बार आग में हाथ जल जाए तो वह फिर उधर नहीं जाता। उसे छूने की कोशिश भी नहीं करता।

कड़ी नं. 14 में साहेब कबीर बता रहे हैं कि यह संसार उल्टा लटक रहा है। जैसे किसी कुँए में अमंत भरा है अर्थात् परमात्मा का आनन्द इस शरीर में है। वह दसवें द्वार के पार ही है जो इस शरीर के अन्दर नीचे को मुख वाला सुषमना द्वार है। जो सुषमणा में से पार हो जाता है वही भक्त लाभ प्राप्त करता है यह साधना नाम व गुरु धारण करके ही बनती है।

कड़ी नं. 15 में सतगुरु कबीर साहेब जी भेद दे रहे हैं कि जब काल साधक ऊँ नाम का जाप परमात्मा को निर्गुण जान कर गुरु धारण करके करता है तो काल स्वयं उस साधक के गुरु का (नकली शब्द रूप) रूप बनाकर आता है तथा महास्वर्ग (महाइन्द्रलोक) में ले जाता है। जब वह महाइन्द्र लोक के निकट जाते हैं तो बहुत जोर से बादल की गर्जना जैसा भयंकर शब्द होता है। जो साधक डर जाता है वह वापिस चौरासी में चला जाता है और जो नहीं डरता है वह अपने गुरु के

साथ आगे बढ़ जाता है। उसे फिर सुहावना नंगारा बजता हुआ सुनाई देता है। चार पंखड़ी वाला कमल का लाल रंग का एक और कमल है उसमें ओंकार धुनि हो रही हो जो महास्वर्ग में है।

कड़ी नं. 16 का अर्थ है कि संत वह है जो दशवें दरवाजे पर काल द्वारा लगाए ताले को सत्यनाम की चाबी से खोल कर आगे ग्यारहवाँ द्वार जो काल ने नकली सतलोक आदि बीस ब्रह्मण्डों के पार इक्कीसवें ब्रह्मण्ड में बनाकर बन्द कर रखा है उसे भी खोल कर परब्रह्म (अक्षर ब्रह्म) के लोक में चला जाता है। क्योंकि नौ द्वार (दो नाक, दो कान, दो आँखें, मुख, गुदा-लिंग ये नौ) प्रगट दिखाई देते हैं। दसवें द्वार पर (जो सुषमना खुलने पर आता है) ताला लगा रखा है तथा ग्यारहवां द्वार परब्रह्म के लोक में प्रवेश करने वाले स्थान पर बना रखा है। जहाँ स्वयं काल भगवान सशरीर विराजमान है।

कड़ी नं. 17 आगे सेत सुन्न है (जो काल भगवान ने नकली बना रखी है) वहाँ एक नकली मानसरोवर बना रखा है तथा जो निर्गुण यानि निराकार मानकर साधना करने वाले जो उपासक ब्रह्म के होते हैं, उन्हें इस सरोवर में स्नान कराने के बाद नकली परब्रह्म के लोक में जो महास्वर्ग में रच रखा है भेज देता है। वे अन्य साधकों की दिव्य दृष्टि से दूर हो जाते हैं। उन्हें ब्रह्म लीन मान लिया जाता है। इस स्थान को काल ने गुप्त रखा हुआ है। जो इसमें पहुँच गए वह पूर्व पहुँचे हंसों को मिलकर आन्नदित होते हैं। जैसे पित्र-पित्रों को मिलकर तथा भूत भूतों को मिल कर। इसमें रंरकार धुनि चल रही है। जिन साधकों ने खैचरी मुद्रा लगा कर साधना ररंकार जाप से की वे महाविष्णु (ब्रह्म-काल) के महास्वर्ग में चले जाते हैं। फिर काल निर्मित महासुन्न है, उसको बिना सतनाम-सारनाम वाले हंस पार नहीं कर सकते। वहाँ पर काल ने मायावी सिंह, व्याघ्र व सर्प छोड़ रखे हैं वे बिना सतनाम-सारनाम के हंस को काटते हैं। इसलिए भक्ति चाहे काल लोक की करो, चाहे सतलोक की, लेकिन गुरु बनाना जरूरी है। यह सहज दास वाले द्वीप की नकल वाला सुखदाई विस्तार है।

यह जो कमल वर्णन किए जा रहे हैं यह सूक्ष्म शरीर के हैं तथा सूक्ष्म शरीर भी काल द्वारा जीव पर चढाया गया है। इसलिए यह सब काल की नकली रचना का वर्णन सतगुरु कबीर जी ने बताया है। अष्ट पंखड़ी वाला एक और कमल है, वह परब्रह्म का लोक कहा है। वास्तव में यह वह स्थान है जहाँ पर पूर्ण ब्रह्म अन्य रूप में निवास करता है तथा वहाँ न ब्रह्म (काल) जा सकता है तथा न तीनों देव ही जा सकते हैं। इसलिए इसे भी परब्रह्म कहा जाता है। उसके दांए हिस्से में बारह भक्त रहते हैं। उसके बांए में दस दल का कमल है जिसमें कर्म सन्यासी निर्गुण उपासक रहते हैं। ऐसे-2 काल ने पाँच ब्रह्म (अपने स्वरूप जैसे अन्य प्रभु) व पाँच अण्ड मण्डल बना रखे हैं। उनको अपनी ओर से निःअक्षर की उपाधी दे रखी है। और चार स्थान गुप्त रखे हैं जिनमें वे भक्त जो सतगुरु कबीर के उपासक होते हैं तथा फिर दोबारा काल भक्ति करने लगते हैं। उनसे काल (ब्रह्म-निरंजन) इतना नाराज हो जाता है कि उन्हें कैदी बनाकर इन गुप्त स्थानों पर रख देता है तथा वहाँ महाकष्ट देता है। आगे दो पर्वत हैं। उनके बीचों बीच एक रास्ता है। वहाँ काल के उपासक जो गुरुपद पर होते हैं उन्हें कुछ दिन इस स्थान पर रखता है। इसे भंवर गुफा भी कहते हैं। वहाँ पर ये हंस (गुरुजन) अपने भक्ति कर्मों के फलरूप सुख भोगते हैं तथा वहाँ सोहं शब्द की स्वतः धुनि चल रही है और मुरली की मीठी-2 धुनि भी चल रही होती है तथा उस स्थान में हीरे-पन्ने जड़े हुए हैं। बहुत ही मनोरम स्थान बना रखा है। इस सोहं मन्त्र द्वारा किए जाप से अक्षर पुरूष (परब्रह्म) के लोक से पार होने पर नकली सतलोक आता है। परब्रह्म रूप धार कर काल ही धोखा

दे रहा है। उसमें महक उठती रहती है। जो बहुत विस्तत स्थान है। यहाँ पर काल उपासक विशेष साधक (मार्कण्डेय ऋषि जैसे) ही पहुँच पाते हैं। यहाँ काल स्वयं सतपुरुष बना बैठा है परंतु गुप्त ही रहता है। वहाँ पर अपने आप धुनि हो रही है। वहाँ पहुँचे हंस उस महाविष्णु रूप में बैठे नकली सतपुरुष पर आदर से चँवर करते हैं तथा आनन्दित होते हैं। उस काल रूपी सतपुरुष का रूप हजारों सूर्य और चन्द्रमाओं की रोशनी हो ऐसा सतपुरुष से कुछ मिलता जुलता रूप बना रखा है।

फिर स्वयं ही अलख पुरुष बना बैठा है तथा अलख लोक बना रखा है। फिर स्वयं ही अगम पुरुष बनकर अगम लोक में व अनामी पुरुष बनकर अकह लोक में सबको धोखा दिए बैठा है तथा कहता है कि वह तो अवर्णननीय है। यह वही जानेगा जो वहां पहुँचेगा।

कबीर साहेब जी ने शब्द के अंत में कहा कि यह सब काया स्थूल व सूक्ष्म शरीर के कमलों का न्यारा-2 विवरण आपके सामने कर दिया। यह सब वर्णन रचना का भेद आपको बताया है यह (दोनों शरीर स्थूल व सूक्ष्म के अन्दर है) काया के अन्दर ही है। इस काल की माया (प्रकति) ने अपनी चतुराई से झूठी रचना करके सतलोक की रचना जैसी ही अण्ड (ब्रह्मण्ड) में नकली रचना कर रखी है। फिर भी इसमें और वास्तविक सतलोक में दिन और रात का अन्तर है। जैसे बारीक नमक तथा बूरा में कोई अंतर दिखाई नहीं देता परंतु स्वाद भिन्न है। कबीर साहेब कहते हैं कि हमारा मार्ग विहंगम (पक्षी) की तरह है। जैसे पक्षी जमीन से उड़ कर सीधा वक्ष की चोटी पर पहुँच जाता है। काल साधकों का मार्ग पपील मार्ग है। जैसे चींटी जमीन से चल कर वक्ष के तने से फिर डार व टहनियों पर से ऊपर जाती है। त्रिकुटी से कबीर साहेब के हंस विमान में बैठ कर उड़ जाते हैं। परंतु ब्रह्म (काल) के उपासक चींटी की तरह चल कर अपने-अपने इष्ट स्थान पर जाते हैं। सारनाम रूपी विमान से ही साधक सतलोक जा सकता है। अन्य किसी उपासना या मंत्र से नहीं जाया जा सकता। जैसे समुद्र को समुद्री जहाज या हवाई जहाज से ही पार किया जा सकता है, तैर कर नहीं। इसलिए पूज्य कबीर साहेब जी ने कहा है कि हम व हमारे हंस आत्मा शब्द (सत्यनाम व सार नाम) के स्मरण से प्राप्त सिद्धि यानि आध्यात्मिक शक्ति से उड़कर सतलोक चले जाते हैं। वहाँ पर आत्मा के शरीर का प्रकाश सोलह सूर्यों के प्रकाश तुल्य हो जाता है। मनुष्य जैसा ही अमर शरीर आत्मा को प्राप्त होता है। सतलोक में जीव नहीं कहलाता, परमात्मा जैसे गुणों युक्त अमर होकर हंस कहलाता है तथा परमात्मा ऊपर के सर्व लोकों में परमहंस कहा जाता है, अनामी लोक में भी परमात्मा तथा आत्मा का अस्तित्व भिन्न रहता है। तत्वज्ञान के आधार से साधक कमलों में नहीं उलझते। चूंकि सतगुरु जी सार शब्द रूपी कुंजी दे देता है, जिससे काल के सर्व ताले अपने आप खुलते चले जाते हैं तथा वास्तविक शब्द की झनकार (धुनि) होने लगती है जो इस शरीर के बाहर सत्यलोक में हो रही है। सत्यलोक पिंड (शरीर) व अण्ड (ब्रह्मण्ड) के पार है। वहां जा कर आत्मा पूर्ण मुक्ति प्राप्त करती है।

।। नकली गुरु को त्याग देना पाप नहीं।।

यह सारी सच्चाई समझ कर वह अन्य गुरू का शिष्य पुण्यात्मा काफी प्रभावित हुआ तथा कहा कि आपके द्वारा बताया गया ज्ञान सही है और हमारी साधना ठीक नहीं है। वह लगातार तीन बार सतसंग सुनने आया तथा कहा कि दिल तो कहता है कि मैं भी नाम ले लूं लेकिन मेरे सामने एक दीवार खड़ी है।

1. एक तो कहते हैं गुरु नहीं बदलना चाहिए, पाप होता है।

2. दूसरे मैंने लगभग 400-500 (चार सौ-पांच सौ) भक्तों को इसी पंथ के संत से उपदेश दिलवा रखा हैं वे मुझे अपना सरदार तथा पूर्ण ज्ञान युक्त समझते हैं। अब मुझे शर्म लगती है कि वे क्या कहेंगें? अर्थात् मुझे धिक्कारेंगे।

मैंने (संत रामपाल दास ने) उस भक्त आत्मा को बताया :-- कबीर साहिब व सर्व संत यही कहते हैं कि झूठे गुरु को तुरंत त्याग दे।

प्रमाण के लिए कबीर पंथी शब्दावली पष्ठ नं. 263 से सहाभार --

झूठे गुरु के पक्ष को, तजत न कीजै बार। राह न पावै शब्द का, भटकै द्वारहिं द्वार।।

जैसे एक वैद्य (डॉक्टर) से इलाज नहीं हो तो दूसरा वैद्य (डॉक्टर) ढूंढना चाहिए। गलत डॉ. के आश्रित रह कर अपने प्राण नहीं गंवाने चाहिए।

दूसरा आपने उनको स्पष्ट बताना चाहिए कि अपनी साधना ठीक नहीं है। आप भी यहां से दोबारा नाम ले लो तथा उन 400-500 प्राणियों का भी उद्धार करवाओ। इस पर वह ज्ञानी पुरुष जो प्रवक्ता भी बना हुआ था बोला कि मैं गुरु नहीं बदल सकता। मेरा मान घट जाएगा तथा वे लोग मुझे बुरा-भला कहेंगे। बेशक नरक में जाऊँ, मैं मार्ग नहीं बदल सकता। इस प्रकार जीव कहीं मान वश तो कहीं अज्ञान वश काल के जाल में फंसा ही रहता है। इस से आप भक्त जन गीता जी के ज्ञान को समझें तथा कबीर साहिब का उपदेश मुझ दास से प्राप्त करके कल्याण करवाऐं।

।। सतनाम का विशेष प्रमाण।।

उस भगवान (पूर्णब्रह्म) को पाने का मन्त्र सत्यनाम (स्वासों द्वारा किया जाने वाला अजपा जाप) व फिर सारनाम व सारशब्द की प्राप्ति पूर्णब्रह्म की सच्ची नाम साधना व उसका परिणाम समझो। देखें - कबीर पंथी शब्दावली पष्ठ नं. 51, 52, 53, 55, 56, 57 । इनमें स्पष्ट लिखा है कि कबीर साहेब ने धर्मदास जी को सत्यनाम (ओ३म-सोहं) दिया है। कहा - ''ऊँ-सोहं भजो नर लोई'' फिर कहा है - ''सोहं शब्द अजपा जाप, साहेब कबीर सो आपै आप'' ।

कबीर पंथी शब्दावली से सहाभार

(प्रमाण के लिए सतगुरु की वाणी) (पष्ठ नं. 51)

चितगुण चित बिलास दास सो अंतर नाहीं।
आदि अंत में मध्य गोसाई अगह गहन में नाहीं।
गहनीगहिए सो कैसा, सोहं शब्दसमान आदिब्रह्म जैसेका तैसा।।
कहें कबीर हम खेलैं सहज सुभावा, अकह अडोल अबोल सोहं समिता।
तामो आन बसा एकरमिता।।
वा रमता को लखे जो कोई। ता को आवागमन न होई।।
ऊँ–सो हं, सोहं सोई ऊँ–सो हं भजो नर लोई।।
ऊँ कीलक सोहं वाला। ऊँ–सोहं बोले रिसाला।।
किलक, कमत, कंमोद, कंकवत, ये चारों गुरु पीर।।
धर्मदास को सत शब्द सुनायो, सतगुरु सत्य कबीर।।
बाजा नाद भया पर तीत। सतगुरु आये भौजल जीत।।
बाजबाज साहब का राज मारा कूटा दगाबाज।।
हाजिरको हजूर गाफिलको दूर हिंदूका गुरु मुसलमानका पीर।'
'सात द्वीपनौखंड में, सोहं सत्यकबीर''।।

(पष्ठ नं. 55)

पल जब पीव से लागा। धोखा तब दिलों का भागा।।
चेतावनी चित विलास। जबलग रहे पिंजर श्वास।।
सोहंशब्द अजपाजाप साहब कबीरसो आपहिं आप।।
चेतावनि चितलागि रहे, यह गति लखै न कोय।
अगम पन्थ के महल में, अनहद बानी होय।।
नाम नैन में रमि रहा, जाने बिरला कोय।
जाको सतगुरु मिलिया, ताको मालुम होय।।
झण्डा रोपा गैब का, दोय परवत के सन्ध।
साधु पहिचाने शब्द को, दष्टि कमल कर बन्ध।।
झलके जोती झिलमिला, बिन बाती विन तेल।।
चहुँदिशि सूरज ऊगिया, ऐसा अदभुत खेल।।
जागंत रूपी रहत है, सतमत गहिर गंभीर।
अजर नाम बिनसे नहीं, सो हं सत्य कबीर।।

''परमेश्वर कबीर जी ने धर्मदास जी को सतनाम दिया। उसका वर्णन इस आरती चौंका में है।''

आरती चौंका

प्रथमहिं मंदिर चौक पुराये। उत्तम आसन श्वेत बिछाये।।
हंसा पग आसन पर दीन्हा। सत्तकवीर कही कह लीन्हा।।
नाम प्रताप हंस पर छाजे। हंसहि भार रती नहिं लागे।।
भार उतार आप सिर लीन्हा। हंस छुडाय कालसों लीन्हा।।
साधसंत मिलि बैठे आई। बहु बिध भक्ति करे चितलाई।।
पान सुपारी नारियर केरा। लौंग लायची किसमिस मेवा।।
सवा सेर आनो मिष्टाँना। सत सवासा उत्तम पाना।।
सात हाथ बस्तर परवाना। सो सतगुरुके आगे आना।।
इतना होय और नहीं भाई। जासों काल दगा मिट जाई।।
धन्य संत जिन आरति साजा। दुख दारिद्र वाके घरसे भागा।।
कहें कबीर सुनो धर्मदासा। ओहं–सोहं शब्द प्रगासा।।

आरती चौकें (प्रथम मंदिर चौंका पुराये ———) में लिखा है ''कहै कबीर सुनों धर्मदासा। ऊँ सोहं शब्द प्रगासा।।'' यह सतनाम (ऊँ–सोहं) है।

(शब्द)

अवधु अविगत से चल आया, कोई मेरा भेद मर्म नहीं पाया।।टेक।।
ना मेरा जन्म न गर्भ बसेरा, बालक है दिखलाया।
काशी नगर जल कमल पर डेरा, तहाँ जुलाहे ने पाया।।
माता–पिता मेरे कछु नहीं, ना मेरे घर दासी।
जुलहा को सुत आन कहाया, जगत करे मेरी है हांसी।।
पांच तत्व का धड़ नहीं मेरा, जानूं ज्ञान अपारा।
सत्य स्वरूपी नाम साहिब का, सो है नाम हमारा।।
अधर दीप (सतलोक) गगन गुफा में, तहां निज वस्तु सारा।
ज्योति स्वरूपी अलख निरंजन (ब्रह्म) भी, धरता ध्यान हमारा।।

हाड चाम लोहू नहीं मोरे, जाने सत्यनाम उपासी।
तारन तरन अभै पद दाता, मैं हूं कबीर अविनासी।।

(शब्द)

होत अनंद अनंद भजनमें, बरषत शब्द अमीकी बादर, भींजत हैं कोई संत।।
अग्रबास जहँ तत्त्वकी नदियां, मानो अठारा गंग।
कर अस्नान मगन है बैठे, चढत शब्दके रंग।।
पियत सुधारस लेत नामरस, चुवत अग्रके बुंद।
रोम रोम सब अमंत भीजे, पारस परसत अंग।।
श्वासा सार रचे मोरे साहब, जहां न माया मोहं।
कहें कबीर सुनो भाई साधू, जपो ओ३म–सोहं।।

(शब्द)

नाम सनेह न छांडिये, भावे तन मन धन जर जाय हो।।
पानीसे पैदा किया, नख सिख सीस बनाय।
वह साहबको बिसारिया, तेरो गाढो होत सहाय।।
महल चुने खाई खने, ऊँचे ऊँचे धाम।
जब जम बैठे कंठमें तेरो, कोई न आवे काम।।
मात पिता सुत बंधुवा, और दुलारी नार।
यह सब हिलमिल बीछुरे, तेरी शोभा है दिन चार।।
जैसे लागी औरसे, दिन दिन दूनी प्रीत।
नाम कबीर न छांडिये, भावे हार होयके जीत।।

साहेब कबीर ने कहा है कि शब्द *(हम अविगत से चल आए ––––––)* ***में*** *''न मेरे हाड चाम न लोहु, जाने सतनाम उपासी। तारन तरन अभय पद दाता, मैं हूँ कबीर अविनाशी''* ***इसका अर्थ है कि कबीर साहेब कहते हैं कि सतनाम का जाप तारन-तरन (पार करने) वाला है। फिर प्रमाणित किया है कि (श्वांसा सार रचे मोरे साहेब, जहां न माया मोहं। कह कबीर सुनों भई साधो, जपो ऊँ सोहं) श्वांसों के द्वारा सत्यनाम ऊँ-सोहं का जाप करो। इससे काल द्वारा लगाए विकार माया मोह आदि भी समाप्त हो कर सार नाम प्राप्ति के योग्य हो जाओगे। यदि सारशब्द नहीं प्राप्त हुआ तो भी मुक्ति शेष रह जाती है। उपरोक्त सत्यनाम भी पूर्ण गुरु से प्राप्त करके जाप करने से लाभ होता है, अन्यथा कोई लाभ नहीं। जैसे कोई अपने आप नौकरी लगने वाला प्रमाण-पत्र (Appointment letter) तैयार करके आप ही हस्ताक्षर कर लेगा। उसे कोई लाभ नहीं। ठीक इसी प्रकार भक्ति मार्ग पर विधिवत् चलना है, तभी सफलता मिलेगी।***

(कबीर पंथी शब्दावली पष्ठ नं. 425, 426, 427)

(शब्द)

तीन लोक जम जाल पसारा। नेम धर्म षटकर्म अचारा।।
आचारे सब दुनी भुलानी। सार शब्द कोउ विरले जानी।।1।।
सत्तपुरुषको जानै कोई। तीन लोक जाते पुनि होई।।
करम भरम तजि शब्द समावे। इस्थिर ज्ञान अमरपद पावे।।2।।
सत्यशब्द को करे विचारा। सो छूटे जमजाल अपारा।।
कहै कबीर जिन तत्त विचारा। सोहं शब्द है अगम अपारा।।3।।

शब्द हमारा सत्य है, सुनि मत जाहु सरख।
जो चाहे निज मुक्तिको, लीजो शब्दहिं परख।।4।।

उपरोक्त शब्द में कहा है (तीन लोक यम जाल पसारा ---। कोई शब्द सार निःअक्षर सोई में) सत्यनाम का अभ्यास भली प्रकार हो जाने पर पूरा गुरु आपको सार शब्द देवेगा। इस सार शब्द को प्राप्त करने योग्य बहुत कम भक्तजन होते हैं। प्रमाण है कि साहेब कबीर के चौसठ लाख शिष्यों में से केवल धर्मदास साहेब ही सारशब्द के अधिकारी हुए थे अन्य नहीं। जिस समय साहेब कबीर ने धर्मदास जी को सारशब्द प्राप्त कराया उस समय कहा था ''धर्मदास तोहे लाख दुहाई, सार शब्द कहीं बाहर न जाई'' । सार शब्द पूरा (पूर्ण) गुरु देवेगा।

(शब्द)

नाम अमलमें रहे मतवाला। प्रेम अमीका पीवे प्याला।।
ज्ञान दीप निज भीतर बारा। सो कहिये सांचा कडिहारा।।1।।
और अमलको रंग न करई। माया ममताको पर हरई।।
सार शब्दमें ध्यान लगावे। सो कडिहार जम जाल बचावे।।2।।
दया छमा और शील विचारा। धीरज धरम संतोष अचारा।।
यह सब धरे ममता मारे। सो कडिहार जगत जल तारे।।3।।
शब्द सरोतर हिरदय सांचा। छाड़ि परपंच सत्यसे राँचा।।
सत्यनाम मो रहै न काँचा। सो कडिहार जगत सो बाँचा।।4।।
कुल करन को मेटै धोखा। समता ज्ञान सु अंतर पोखा।।
ज्ञान रतनके पूरे नौका। सो कड़िहार बैठि है चौका।।5।।
दया छिमा संतोष विचारा। शील वैराग ज्ञान अधारा।।
काम क्रोध चिन्ता नहिं परई। सो कड़िहार आरति करई।।6।।
आसा वासा मनको नासे। माया मोह न फटके पासे।।
कर्म कला सो तिनका तोरे। सो कडिहार नारियल मोरे।।7।।
सिख साखा सब प्रेम बढावैं। बहुत भांति ते सेवा लावें।।
कोटिक शिष्य करै सनमाना। रह कडिहार शब्द लपटाना।।8।।
गुरुका शब्द सदा परकासे। भेद भरम का दुविधा नासे।।
नहिं तो कालरूप कडिहारा। सब जीवनका करै अहारा।।9।।
लोभ मोहकी धरै सगाई। शब्द छाड़ि जग करै ठगाई।।
शब्द चाल हिरदे नहिं आवे। सो कडिहार कैसे लोक सिधावे।।10।।
आसन चाँपै फूलके, भरै जो जु जमको भाव।
कहैं कबीर तब जानि है, पडै बज्रको घाव।।

फिर (नाम अमलमें रहै मतवाला -----) इसमें कहा है कि पूर्ण गुरु (कड़िहार) जो जीव को काल के लोक से निकाल कर सतलोक (सत्यनाम व सारनाम-सारशब्द के आधार) ले जाता है वह कड़िहार (काड़ने/निकालने वाला) कहलाता है। यदि सत्यनाम (ऊँ-सोहं) नहीं देता तथा फिर सारनाम नहीं देता वह काल का स्वरूप गुरु (नकली कड़िहार) है अर्थात् काल साधना करवा कर नरक भिजवा देगा, वह काल का ऐजेंट है। नाम देने का अधिकारी वही है जिसको गुरु जी ने आदेश दे रखा है तथा सत्यनाम व सारनाम साधना बताता है।

(शब्द)

सतगुरु सो सतनाम सुनावे। और गुरु कोइ काम न आवे।।
तीरथ सोई जो मोछै पापा। मित्र सोई जो हरै संतापा।।1।।
जोगी सो जो काया सोधे। बुद्धि सोई जो नाहि विरोधे।।
पण्डित सोई जो आगम जानै। भक्त सोई जो भय नहिं आनै।।2।।
दातै जो औगुन परहरई। ज्ञानी सोइ जीवता मरई।।
मुक्ता सोई सतनाम अराधे। श्रोता सोई जो सुरतिहिं साधै।।3।।
सेवक सोई गहै विश्वासा। निसिदिन राखै संतन आसा।।
सतगुरु का लोपै नहि बाचा। कहै कबीर सो सेवक सांचा।।4।।

''सतगुरु सो सतनाम सुनावै'' इसमें कहा है कि वही सतगुरु है जो सत्यनाम देता है अन्य नाम देने वाला गुरु कोई काम नहीं आवेगा। उल्ट काल के मुख में ले जावेगा। वह शिष्य पार होएगा जो गुरु वचन को मान कर गुरु जी के अनुसार चलेगा।

(कबीर पंथी शब्दावली पष्ठ नं. 353)

दुनिया अजब दिवानी, मोरी कही एक न मानी।।टेक।।
तजि प्रत्यक्ष सतगुरु परमेश्वर, इत उत फिरत भुलानी।।
तीरथ मूरति पूजत डोले, कंकर पत्थर पानी।।1।।
विषय वासनाके फन्दे परि, मोहजाल उरझानी।।
सुखको दुख दुखको सुख माने, हित अनहित नहिं जानी।।2।।
औरनको मूरख ठहरावत, आप बनत है सयानी।।
साँच कहौं तौ मारन धावे, झूठेको पतियानी।।3।।
तीन गुणों की करत उपासना, भ्रमित फिरें अज्ञानी।
गीता कहे इन्हें मत पूजो, पूर्ण ब्रह्म पिछानी।।4।।
ब्रह्म उपासत ऋषि मुनि, भ्रमत चारों खानी।।
कहैं कबीर कहां लग बरणों , अद्भभुत खेल बखानी।।5।।

''दुनियां अजब दिवानी ------'' में कहा है कि भक्तजनों ने मेरे द्वारा बताई गई भक्ति की विधि नहीं मानी। गुरु रूपी प्रत्यक्ष परमात्मा को छोड़कर तीर्थ यात्रा, पत्थर पूजा, पित्र पूजा आदि पूजन करते हैं। श्री मदभगवत गीता अध्याय 7 श्लोक 12 से 15,20 से 23 में स्पष्ट किया है कि तीनों गुणों (रजगुण ब्रह्मा, सतगुण विष्णु, तमगुण शिव) की उपासना करने वाले मूर्ख हैं वे राक्षस स्वभाव को धारण किए हुए मनुष्यों में नीच दुष्कर्म करने वाले हैं वे मेरी (गीता ज्ञान दाता ब्रह्म की) पूजा भी नहीं करते। फिर गीता अध्याय 7 श्लोक 18 में ब्रह्म साधना को अनुत्तम (अश्रेष्ठ) कहा है क्योंकि पूर्ण मोक्ष नहीं होता। इसलिए ऋषि-मुनि जन ब्रह्म साधना करके भी काल जाल में जन्म-मत्यु में ही रह जाते है। इसलिए गीता अध्याय 18 श्लोक 62 में कहा है कि पूर्ण मोक्ष के लिए उस पूर्ण परमात्मा की शरण ग्रहण करो। काल के दबाव में आकर सच्चाई को तो झूठ मानते हैं और झूठ को सच। सच्चाई बतावें तो मारने दौड़ते हैं। कबीर परमेश्वर जी स्वयं परमात्मा आए थे। इसलिए कहा है कि मैं पूर्ण परमात्मा स्वयं सतगुरू भेष में कह रहा हूँ मेरी एक नहीं मानता अन्य भ्रमित करने वालों की बातें मान कर इधर-उधर भटकते रहते हैं। पूर्ण सतगुरू का मार्ग ग्रहण करने से मोक्ष सम्भव है परमात्मा कबीर जी का संकेत है कि जब भी पूर्ण सन्त सतगुरू प्रकट होता है उसके द्वारा बताए मार्ग पर लग कर मोक्ष प्राप्त करना ही बुद्धिमता है।

(कबीर पंथी शब्दावली के पष्ठ नं. 271 से 275 तक)

स्वासा सुमिरण होत है, ताहि न लागै बार।
पल पल बन्दगी साधना, देखो दंष्टि पसार।।173।।
सत्य नामको खोजिले, जाते अग्नि बुझाय।
बिना सतनाम बांचे नहीं, धरमराय धरि खाय।।184।।
कबिरा सुमिरण सार है, और सकल जंजाल।
आदि अंत मध सोधिया, दूजा देखा काल।।192।।
नाम लिया जिन सब लिया, सकल वेदका भेद।
बिना सतनाम नरके पड़ा, पढता चारु वेद।।198।।
राम नाम निज औषधी, सतगुरु दई बताय।
औषध खाय रु पथ रहै, ताको वेदन जाय।।201।।
आदि नाम निज सार है, बूझि लेहु हो हंस।
जिन जाना निज नामको, अमर भयो स्यों बंस।।205।।
आदि नाम निज मूल है, और मंत्र सब डार।
कहै कबीर निज नाम बिन, बूडि मुआ संसार।।206।।
आदि नामको खोजहू, जो है मुक्ति को मूल।
ये जियरा जप लीजियो, भर्म मता मत भूल।।207।।
कहै कबीर निज नाम बिन, मिथ्या जन्म गवांय।
निर्भय मुक्ति निःअक्षरा, गुरु विन कबहुँ न पाय।।208।।
जो जन होवे जौहरी, सो धन ले बिलगाय।
सोहं सोहं जपि मुये, मिथ्या जन्म गँवाय।।218।।
सबको नाम सुनावहू, जो आवे तूव पास।
शब्द हमारो सत्य है, दंढ राखो विश्वास।।220।।
होय विवेकी शब्दका, जाय मिलै परिवार।
नाम गहै सो पहुँचिहैं, मानहु कहा हमार।।221।।
आदि नाम पारस अहै, मन है मैला लोह।
परसतही कंचन भया, छूटा बंधन मोह।।222।।
सुरति समावे नामसे, जगसे रहै उदास।
कहै कबीर गुरु चरणमें, दंढ राखै विश्वास।।223।।
ज्ञान दीप प्रकाश करि, भीतर भवन जराय।
बैठे सुमरे पुरुषको, सहज समाधि लगाय।।229।।
अछय बक्षकी डोर गहि, सो सतनाम समाय।
सत्य शब्द प्रमाण है, सत्यलोक कहँ जाय।।230।।
कोइ न यम सो बाचिया, नाम बिना धरिखाय।
जे जन बिरही नामके, ताको देखि डराय।।232।।
कर्म करै देही धरै, औ फिरि फिरि पछताय।
बिना नाम बांचे नहीं, जिव यमरा लै जाय।।233।।

(श्वांसा सुमरण होत है ....) इन दोहों में कहा है कि सत्यनाम (ऊँ-सोहं) श्वांसो द्वारा होता है, उसकी खोज करो अर्थात् इस मंत्र को देने वाला पूर्ण गुरु मिले उससे उपदेश लो तथा स्मरण करो। फिर पूर्ण गुरु आपको सारनाम देवेगा। यदि सारनाम नहीं मिला तो आपका जीवन निष्फल

है। हाँ, सत्यनाम के आधार से आपको मनुष्य जन्म मिल जाएगा। परंतु सत्यलोक प्राप्ति नहीं।

इसलिए कहा है कि जो ज्ञान योगयुक्त होगा वही हमारे सारनाम को पाने की लग्न लगाएगा अन्यथा केवल सत्यनाम (ऊँ-सोहं) से भी जीव छुटकारा नहीं है।

इस स्थिति में गीता जी में कहा है कि मूढ (मूर्ख) जिन्हें सच्चाई का ज्ञान नहीं है, वे तो वैसे ही अनजानपने में सतमार्ग स्वीकार नहीं कर सकते। इसलिए उनको बार-2 कहना हानिकारक हो सकता है। कबीर साहेब कहते हैं :--

कबीर सीख उसी को दीजिए, जाको सीख सुहाय। सीख दयी थी वानरा, बइयाँ का घर जाय।।

अर्थात् वे उल्टे गले पड़ जाएंगे। मरने मारने को तैयार हो जाएंगे। जैसे साहेब कबीर के पीछे काशी के पाण्डे व काजी मुल्ला पड़ गए थे लेकिन सच्चाई स्वीकार नहीं की।

जो ज्ञानी पुरुष है जो समझते भी हैं कि हम गलत साधना स्वयं कर रहे हैं तथा अनुयाईयों को भी गलत मार्ग दर्शन कर रहे हैं वे अपनी मान बड़ाई वश नहीं मानते। वे चातुर (चतुर) प्राणी कहे हैं। इसलिए दोनों ही भक्ति अधिकारी नहीं हैं।

यथार्थ साधना : जो सोहं का जाप दो हिस्से करके श्वांस-उश्वांस से करते हैं वे किसी उपास्य इष्ट की प्राप्ति या निर्गुण ब्रह्म की प्राप्ति के लिए करते हैं वह इसका अर्थ लगाता है कि सो - अहमं [वह (इष्ट-भगवान जिसके वे उपासक हैं मान कर जपते हैं)] और सोचते हैं कि वह ईश्वर (अहम्) मैं ही हूँ। इसका ही दूसरा अर्थ लगाते हैं कि अहम् ब्रह्मास्मि। वे भक्त महिमा तो गाते हैं विष्णु भगवान की और नाम जपते हैं सोहं। यह साधना उन्हें स्वर्ग प्राप्ति करवा कर फिर चौरासी लाख योनियों में भरमाती है।

ऊँ और सोहं का इकट्ठा जाप 'सत्यनाम' कहलाता है। यह श्वांसों द्वारा जपा जाता है। इसे 'अजपा जाप' भी कहते हैं। इसी का प्रमाण कबीर साहेब की वाणी में है जिसमें धर्मदास को नाम दिया है। कबीर पंथी शब्दावली में पष्ठ नं. 51 पर वाणी में लिखा है ''ओ३म-सोहं भजो नर लोई'', यही सत्यनाम है।

फिर कबीर पंथी शब्दावली के पष्ठ नं. 52-53 पर लिखा है।

श्रोता वक्ता की अधिक महिमा, विचार कुण्ड नहाईए। सारशब्द निबेर लीजे, बहुरि न भवजल आईए।।
सर्वसाधु संत समाज मध्ये, भक्ति मुक्ति दंढाईए। सुमिरण कर सतलोक पहुँचे, बहुरि न भवजल आईए।।
सोहं शब्द अजपा जाप, साहेब कबीर सो आपही आप। सोहं शब्द से कर प्रीति, अनभय अखण्ड घर को जीत।।
तन की खबर कर भाई, जा में नाम रूसनाई।।

फिर ''ज्ञानगुदरी'' कबीर पंथी शब्दावली के पष्ठ नं. 55 पर।

इसमें लिखा है :-- मन को मारने का साधन सत्यनाम (ऊँ-सोहं) है केवल ऊँ मन्त्र नहीं। सत्यनाम श्वांसों से सुमरण होता है। ॐ शब्द का जाप काल लोक पार करने के बाद अपने आप बन्द हो जाता है तथा सोहं मन्त्र का जाप प्रारम्भ रहता है। परब्रह्म के लोक को पार करके भंवर गुफा आती है वहां तक सोहं शब्द के जाप की कमाई ले जाती है। आगे सत्यलोक में सारशब्द की कमाई ले जाती है।

निहचे धोति पवन जनेऊ, अजपा जाप जपे सो जाने भेऊ। इंगला, पिंगला के घर जाई, सुषमना नीर रहा ठहराई।।
ऊँ–सोहं तत्त्व विचारा, बंकनाल में किया संभारा।।
मनको मार गगन चढिजाई, मानसरोवर पैठ नहाई।।

❖ *संत गरीबदास जी को परमेश्वर कबीर जी सतलोक लेकर गए थे। उनको सतलोक*

दिखाकर तत्वज्ञान बताकर पथ्वी पर छोड़ा था। इसी का प्रमाण महाराज गरीबदास साहेब जी (छुड़ानी, हरियाणा) ने अपनी वाणी में दिया है। सतग्रन्थ साहिब पष्ठ नं. 425 पर ।

राम नाम जप कर थीर होई। ऊँ–सोहं मन्त्र दोई।।
कहा पढो भागवत गीता, मनजीता जिन त्रिभुवन जीता।
मनजीते बिन झूठा ज्ञाना , चार वेद और अठारा पुराना।।

भावार्थ :- राम (ब्रह्म-अल्लाह-रब) का नाम जप कर निश्चल हो जाओ। भ्रमों भटको मत। वह राम का नाम ऊँ-सोहं है इसी से मन जीता जा सकता है। यदि यह सत्यनाम (ऊँ-सोहं) पूर्ण गुरु से प्राप्त नहीं हुआ चाहे आपको इस पुस्तक के पढ़ने से ज्ञान भी हो जाए कि सत्यनाम यह 'ऊँ-सोहं' है तथा नाम जाप भी करने लग जाएँ तो भी कोई लाभ नहीं है। या नकली गुरु बन कर यह नाम देने लग जाए। वह पाखंडी स्वयं नरक में जाएगा तथा अनुयाईयों को भी डुबोएगा। वर्तमान में सत्यनाम व सारनाम दान करने का केवल मुझ दास (संत रामपाल दास) को आदेश मिला है। एक समय में एक ही तत्वदर्शी संत आता है, जो पूर्ण परमात्मा कबीर साहेब (कविर्देव) का कंप्या पात्र होता है। अन्य कोई उपरोक्त नामदान करता है तो उसे नकली जानों।

इसलिए इस सतनाम के जाप से मन जीता जा सकता है। इसके प्राप्त हुए बिना चाहे ब्रह्मा जैसा विद्वान हो वह भी मन के आधीन रहेगा। फिर सारनाम व सारशब्द पूरा गुरु प्रदान करके पार करेगा।

विशेष वर्णन :-- गरीबदास जी कत सतग्रन्थ साहिब के पष्ठ नं. 423 से 427 और 431 से 437 से सहाभार

सौ करोर दे यज्ञ आहूती, तौ जागै नहीं दुनिया सूती।
कर्म काण्ड उरले व्यवहारा, नाम लग्या सो गुरु हमारा।।
शंखौं गुणी मुनी महमंता, कोई न बूझै पदकी संथा।।
शंखौं मौनी मुद्रा धारी, पावत नांही अकल खुमारी।
शंखौं तपी जपी और जोगी, कोईन अमी महारस भोगी।।
शंखौं उर्ध्वमुखी आकाशा, पावत नांही पदहि निवासा।
शंखौं करै आचार बिचारा, सोतो जांहि धर्म दरबारा।।
शंखौं बहु विधि भेष बनावै, साक्षी भूत कोई नहीं पावै।
शंखौं जोगी जोग जुगंता, पावत नांही पदकी संथा।।
शंखौं जती सती जरि जांही, सो पावै नहीं पदकी छांही।
शंखौं दानी भुगतै दाना, पावत नांही पद निर्वाना।।
शंख अश्वमेघ खड़ी दरबारा, है कोई हमकूं त्यारन हारा।
शंखौं गंगा और किदारा, परम पदारथ इनसैं न्यारा।।
शंखौं वेद पाठ धुनि होई, उस पदकूं बांचै नहीं काई।
तीरथ शंख नदी बहु भांती, वा पद सेती कोई न राती।।
शंखौं शालिग पूजनहारा, कोई न पावै पद दीदारा।।
गरीब, शालिग पूजि दुनिया मुई, प्रतिमा पानी लाग।
चेतन होय जड पूजहीं, फूटे जिनके भाग।।81।।
शंखौं नेमी नेम करांही, भक्ति भाव बिरलै उर आंही।
उस समर्थ का शरणा लैरे, चौदा भुवन कोटि जय जय रे।।

ऊपर की साखियों चौपाईयों में संत गरीबदास जी महाराज जो कबीर साहेब के शिष्य हैं, वे

कह रहे हैं कि :-

ज्ञानहीन प्राणी नहीं समझते कि सच्चे नाम व सच्चे (अविनाशी) भगवान (सत साहेब) के भजन व शरण बिना चाहे करोंड़ों यज्ञ करो। शंखों विद्वान (गुणी) महंत व ऋषि अपने स्वभाव वश सच्चाई (सत्य साधना) को स्वीकार नहीं करते। अपने मान वश शास्त्र विधि रहित पूजा (साधना) करते हैं तथा नरक के भागी होते हैं। गीता जी के अध्याय 16 के श्लोक 23-24 में यही प्रमाण है।

शंखों मौनी (मौन धारण करने वाले) तथा पाँचों मुद्रा प्राप्ति (चांचरी-भूचरी, खेंचरी-अगोचरी, ऊनमनी) किए हुए भी काल जाल में ही रहते हैं। शंखों जप (केवल ऊँ नाम का व ऊँ नमो भागवते वासुदेवाय नमः, ऊँ नमो शिवाय, राधा स्वामी नाम व पाँचों नाम-ओंकार, ज्योति निंरजन, रंरकार, सोहं, सतनाम जाप या अन्य नाम जो पवित्र गीता जी व पवित्र वेदों तथा परमेश्वर कबीर साहेब जी की अमंतवाणी व अन्य प्रभु प्राप्त संतों की अमंतवाणी से भिन्न हैं) करने वाले तथा तपस्वी व योगी भी पूर्ण मुक्त नहीं हैं। पूर्ण लाभ प्राप्त नहीं है। नाना प्रकार के भेष (वस्त्र भिन्न गैरुवे वस्त्र पहनना, जटा रखना या पत्थर पूजने वाले, मूंड मुंडवाना, नाना पंथों के अनुयायी बन जाना) भी व आचार-विचार करने वाले यानि स्वयं कुछ भक्ति के नियम बनाकर नित्य उनका पालन करने वाले तथा कर्मकाण्ड करने वाले, शंखों दानी दान करने वाले व गंगा-केदारनाथ, गया आदि अड़सठ तीर्थ या चारों धामों की यात्रा करने वाले भी परमात्मा का तत्वज्ञान न होने से ईश्वरीय आनन्द का लाभ प्राप्त नहीं कर सकते। पूर्ण मुक्त नहीं हो सकते। श्री गीता जी के अध्याय 11 के श्लोक 48 में स्पष्ट कहा है कि अर्जुन मेरे इस वास्तविक ब्रह्म (काल-विराट) रूप को कोई न तो पहले देख पाया न ही आगे देख सकेगा। चूंकि मेरा यह रूप (अर्थात् ब्रह्म-काल प्राप्ति) न तो यज्ञों से, न ही तप से, न ही दान से, न ही जप से, न ही वेद पढ़ने से, अर्थात् वेदों में वर्णित विधि से न ही क्रियाओं से देखा जा सकता अर्थात् परमात्मा{जो यहाँ तीन लोक व इक्कीस ब्रह्मण्ड का भगवान (काल) है} की प्राप्ति किसी भी साधना से नहीं हो सकती। पवित्र गीता जी में वर्णित पूजा (उपासना) विधि से सिद्धियाँ प्राप्ति, चार मुक्ति (जो स्वर्ग में रहने की अवधि भिन्न होती है तथा कुछ समय इष्ट देव के पास उसके लोक में रह कर फिर चौरासी लाख जूनियों में भ्रमणा-भटकणा बनी रहेगी)। जिसमें काल (ब्रह्म) भगवान कह रहा है कि मेरी शरण में आ जा। तुझे मुक्त कर दूंगा। वह काल (ब्रह्म) भजन के आधार पर कुछ अधिक समय स्वर्ग में रख कर फिर नरक में भेज देता है। क्योंकि पवित्र गीता जी में कहा है कि जैसे कर्म प्राणी करेगा (जैसे का भाव है पुण्य भी तथा पाप भी दोनों भोग्य हैं) वे उसे भोगने पड़ेंगे। फिर कहा है कि कल्प के अंत में सर्व (ब्रह्मलोक पर्यान्त) लोकों के प्राणी नष्ट हो जाएंगे। उस समय स्वर्ग व नरक समाप्त हो जाएंगे, फिर सष्टि रचूँगा। वे प्राणी फिर कर्माधार पर जन्मते मरते रहेंगे। विचार करें पाठकजन! पूर्ण मुक्ति कहाँ? श्री गीता जी के अध्याय 9 का श्लोक 7 में प्रमाण है।

इसमें साफ लिखा है कि प्रलय के समय सर्व भूत प्राणी नष्ट हो जाएंगे। फिर अर्जुन कहाँ बचेगा? इसलिए गरीबदास जी महाराज कहते हैं कि उस पूर्ण परमात्मा (समर्थ) पूर्ण ब्रह्म (कबीर साहेब) की शरण में जाओ जिसको प्राप्त कर फिर सदा के लिए जन्म-मरण मिट जाएगा। पूर्ण मुक्त हो जाओगे। इसी का प्रमाण श्री गीता जी में है। अध्याय 18 श्लोक 46, 62,66 और अध्याय 8 के श्लोक 8, 9, 10 और अध्याय 2 का श्लोक 17 में प्रमाण है।

सोहं मंत्र कल्प किदारा, अमर कछ होय पिंड तुमारा।।

ऊँ आदि अनादि लीला, या मंत्र मैं अजब करीला।

सोहं सुरति लगै सहनांना, टूटै चौदा लोक बंधाना।।
राम नाम जपि करि थिर होई, ऊँ सोहं मंत्र दोई।
गगन मंडलमें सुंनि अधारी, शंखौं कल्प लगी जुग तारी।
अनंत कोटि जाकै अवतारा, राम कष्ण ठाडे दरबारा।।
ब्रह्माविष्णु और शंकर जोगी, अनंत कोटि रसिया रस भोगी।
परानंदनी नाद बजावै, तास पुरुष शिर चौंर ढुरावै।।
कोटि रामायण गीता गावैं, ठारा पुराण पढै चित्तलावैं।
ऋग यजु साम अथर्वण पढिया, एकै पैंड पंडित नहीं चढिया।।
दिव्य दष्टिकूं दर्शन होई, चौदाह भुवन फिरौं क्यौं न कोई।
सतगुरु बिना सुरति नहीं लागै, जरै मरै कुल देही त्यागै।।
सतगुरु बतलावै ठौर ठिकाना, को मारै प्रबीन निशाना।।
सुख निधान है सुरति सनेही, प्रगट बोलै पुरुष विदेही।
निजानंद निर्गुणनिःकामी, पूरण ब्रह्म परमगुरु स्वामी।।
सोहं सुरति निरति सैं सेवै, आप तरै औरनकूं खेवै।
परमहंस वीर्य बिस्तारा, ऊँ मंत्र कीन्ह उचारा।।
सोहं सुरति लगावै तारी, काल बलीसैं जाइ न टारी।।
गरीब, कालबली कलि खात है, संतौं कौं प्रणाम।
आदि अंत आदेश है, ताहि जपै निज नाम।।92।।
गिरिवर नदी निवासा, ठार भार बनमाला।
ऊँ सोहं श्वासा, कर्म कुसंगति काला।।11।।
सुख सागर आनंदा, सुमरथ शब्द सनेही।
मेटत है दुःख दुंदा, पूरण ब्रह्म विदेही।।13।।
ऊँ सोहं मूलं, मध्य सलहली सूतं।
बिनशत यौह अस्थूलं, न्यारा पद अनभूतं।।48।।
ऊँ सोहं दालं, अकंडा बीज अंकूरं।
ऊगै कला कर्त्तारं, नाद बिन्द सुर पूरं।।49।।
ऊँ सोहं सीपं, स्वांति बिना क्या होई।
निपजत है दिल दीपं, स्वाती बून्द परोई।।51।।
सुकच मीन होय संगी, मोती सिन्धु पठावै।
झूठी प्रीति इकंगी, सतगुरु शब्द मिलावै।।55।।
सत्य सुकृत संगाती, छाड़ि दिया निज नामा।
देवल धामौं जाती, भूलि गये औह धामा।।79।।
षट् शास्त्र संगीता, पढे बनारस जाई।
पंडित ज्ञानी रीता, औह अक्षर इहां नांही।।86।।
कोटि ज्ञान बकि मूवा, ब्रह्म रंद्र नहीं जाना।
जैसे सिंभल सूंवा, शीश धुनि पछिताना।।87।।
कर्मकाण्ड व्यवहारा, दीन्हा होय सो पावै।
नहीं प्राण निस्तारा, भवसागर में आवै।।93।।

उस समर्थ (परमात्मा-परमेश्वर-पूर्ण ब्रह्म) को प्राप्ति की विधि सत्यनाम व सारनाम है।

सत्यनाम (ऊँ-सोहं) का काम है, कि ऊँ मन्त्र स्वर्ग व महास्वर्ग तक की प्राप्ति करवा देता है, इस मन्त्र की यह करामात है, साथ में सोहं मन्त्र का जाप चौदह लोकों के बन्धन से मुक्त कर देता है। फिर सार शब्द प्राप्ति कर पूर्ण मुक्त हो जाता है। ऊँ मन्त्र से काल का ऋण उतारना है तथा साथ में सोहं मन्त्र के जाप को सारनाम में लौ लगा के जपै तो कालबलि (ब्रह्म) से रूक नहीं सकता। वह हंस पार हो जाएगा। सारनाम बिना केवल ॐ तथा सोहं मंत्र से भी लाभ नहीं है, जैसे ॐ तो सीप की काया जानों, सोहं सीप में जीव जानों, यदि सारनाम रूपी स्वांति नहीं मिली तो मुक्ति रूपी मोती नहीं बनेगा। सारनाम तो छोड़ दिया। छः शास्त्रों, गीता जी में, वेदों में सोहं का जाप नहीं है। इसलिए विद्वान (पंडित) ऋषि, मुनि सर्व पूर्ण मोक्ष से वंचित हैं पूर्ण मुक्त नहीं हैं।

निम्नलिखित वाणियाँ कबीर सागर के ज्ञान बोध से ली गई हैं।

।। कबीर साहेब का शब्द ।।

ऐसा राम कबीर ने जाना। धर्मदास सुनियो दै काना।।
सुन्न के परे पुरुष को धामा। तहँ साहब है आदि अनामा।।
ताहि धाम सब जीवका दाता। मैं सबसों कहता निज बाता।।
रहत अगोचर (अव्यक्त)सब के पारा। आदि अनादि पुरुष है न्यारा।।
आदि ब्रह्म इक पुरुष अकेला। ताके संग नहीं कोई चेला।।
ताहि न जाने यह संसारा। बिना नाम है जमके चारा।।
नाम बिना यह जग अरुझाना। नाम गहे सौ संतसुजाना।।
सच्चा साहेब भजु रे भाई। यहि जगसे तुम कहो चिताई।।
धोखा में जिव जन्म गँवाई। झूठी लगन लगाये भाई।।
ऐसा जग से कहु समझाई। धर्मदास जिव बोधो जाई।।
सज्जन जिव आवै तुम पासा। जिन्हें देवैं सतलोकहि बासा।
भ्रम गये वे भव जलमाहीं। आदि नाम को जानत नाहीं।।
पीतर पाथर पूजन लागे। आदि नाम घट ही से त्यागे।।
तीरथ बर्त करे संसारे। नेम धर्म असनान सकारे।।
भेष बनाय विभूति रमाये। घर घर भिक्षा मांगन आये।।
जग जीवन को दीक्षा देही। सत्तनाम बिन पुरुषहि द्रोही।।
ज्ञान हीन जो गुरु कहावै। आपन भूला जगत भूलावै।।
ऐसा ज्ञान चलाया भाई। सत साहबकी सुध बिसराई।।
यह दुनियां दो रंगी भाई। जिव गह शरण असुर (काल) की जाई।।
तीरथ व्रत तप पुन्य कमाई। यह जम जाल तहाँ ठहराई।।
यहै जगत ऐसा अरुझाई। नाम बिना बूड़ी दुनियाई।।
जो कोई भक्त हमारा होई। जात वरण को त्यागै सोई।।
तीरथ व्रत सब देय बहाई। सतगुरु चरणसे ध्यान लगाई।।
मनहीं बांध स्थिर जो करही। सो हंसा भवसागर तरही।।
भक्त होय सतगुरुका पूरा। रहै पुरुष के नित्त हजूरा।।
यही जो रीति साधकी भाई। सार युक्ति मैं कहूँ गुहराई।।
सतनाम निज मूल है, कह कबीर समझाय।

दोई दीन खोजत फिरें, परम पुरुष नहिं पाय।।
गहै नाम सेवा करै, सतनाम चित लावै।
सतगुरु पद विश्वास दृढ़, सहज परम पद पावै।।
ऐसे जग जिव ज्ञान चलाई। धर्मदास तोहि कथा सुनाई।।
यही जगत की उलटी रीती, नाम न जाने कालसों प्रीती।।
वेद रीति सुनयो धर्मदासा। मैं सब भाख कहों तुम पासा।।
वेद पुराण में नामहि भाषा। वेद लिखा जानो तुम साखा।।
चीन्हों है सो दूसर होई। भर्म विवाद करें सब कोई।।

''संसार रूप वृक्ष के मूल, तना, डार, शाखा, तथा पत्तों का वर्णन''

मूल नाम न काहू पाये। साखा पत्र गह जग लपटाये।।
डार शाख को जो हृदय धरहीं। निश्चय जाय नरकमें परहीं।।
भूले लोग कहे हम पावा। मूल वस्तू बिन जन्म गमावा।।
जीव अभागि मूल नहिं जाने। डार शाख को पुरुष बखाने।।
कबीर, अक्षर पुरूष एक पेड़ है, क्षर पुरूष वाकि डार। तीनों देवा शाखा हैं, पात रूप संसार।
कबीर, हम ही अलख अल्लाह हैं, मूल रूप करतार। अनन्त कोटि ब्रह्मण्ड का, मैं ही सिरजनहार।।
पढ़े पुराण और वेद बखाने। सतपुरुष जग भेद न जाने।।
वेद पढ़े और भेद न जाने। नाहक यह जग झगड़ा ठाने।।
वेद पुराण यह करे पुकारा। सबही से इक पुरुष नियारा।
तत्वदर्ष्टा को खोजो भाई, पूर्ण मोक्ष ताहि तैं पाई।
कविः नाम जो बेदन में गावा, कबीरन् कुरान कह समझावा।
वाही नाम है सबन का सारा, आदि नाम वाही कबीर हमारा।।

''गीता में भी संसार वृक्ष का वर्णन''

गीता अध्याय 15 श्लोक 1-4 तथा 16-17 में स्पष्ट कहा है कि इस संसार रूप पीपल का वृक्ष की मूल तो ऊपर पूर्ण परमात्मा है तथा जो संत इस संसार वृक्ष के सर्व भागों (मूल कौन प्रभु है, तना, डार, शाखा कौन प्रभु हैं तथा पत्ते कौन कहे जाते हैं, इनका) का विस्तार से वर्णन बताए तो (सः वेद वित्) वह वेद के तात्पर्य को जानने वाला है यानि वह तत्वदर्शी संत है। यह वर्णन स्वयं परमेश्वर कबीर जी ने तत्वदर्शी संत की भूमिका करके बताया है जो ऊपर वर्णन है। कहा है कि अक्षर पुरूष तो तना है, क्षर पुरूष उस पेड़ की मोटी डार है। उस डार से निकली तीनों गुण रूपी शाखाऐं यानि रजगुण ब्रह्मा जी, सतगुण विष्णु जी तथा तमगुण शिव जी रूपी शाखाऐं हैं। इन शाखाओं पर लगे पत्ते रूप संसार है।

कबीर परमेश्वर जी ने स्पष्ट किया है कि उस संसार रूप वृक्ष की मूल (जड़) रूप मैं हूँ। मैं ही अलख (अव्यक्त) अल्लाह (परमात्मा) हूँ। सर्व की रचना करने वाला, धारण-पोषण करने वाला भी मैं हूँ।

गीता अध्याय 15 के श्लोक 16

द्वौ, इमौं, पुरुषौ, लोके, क्षरः, च अक्षरः, एव, च,
क्षरः, सर्वाणि, भूतानि, कूटस्थः, अक्षरः, उच्यते।।

अनुवाद : (लोके) इस संसारमें (द्वौ) दो प्रकारके (पुरुषौ) प्रभु हैं। (क्षरः) नाशवान् प्रभु अर्थात् ब्रह्म(च) और (अक्षरः) अविनाशी प्रभु अर्थात् परब्रह्म (एव) इसी प्रकार (इमौ) इन दोनों के लोक में (सर्वाणि) सम्पूर्ण (भूतानि) प्राणियोंके शरीर तो (क्षरः) नाशवान् (च) और (कूटस्थः) जीवात्मा (अक्षरः) अविनाशी (उच्यते) कहा जाता है।

अध्याय 15 के श्लोक 17

उत्तमः, पुरुषः तु, अन्यः, परमात्मा, इति, उदाहृतः।
यः लोकत्रयम्, आविश्य, बिभर्ति, अव्ययः, ईश्वरः।।

अनुवाद : (उत्तम) उत्तम (पुरुषः) प्रभु (तु) तो उपरोक्त क्षर पुरूष अर्थात् ब्रह्म तथा अक्षर पुरूष अर्थात् परब्रह्म से (अन्यः) अन्य ही है (परमात्मा) परमात्मा (इति) इस प्रकार (उदाहृतः) कहा गया है (यः) जो (लोकत्रयम्) तीनों लोकोंमें (आविश्य) प्रवेश करके (बिभर्ति) सबका धारण–पोषण करता है एवं (अव्ययः) अविनाशी (ईश्वरः) उपरोक्त प्रभुओं से श्रेष्ठ प्रभु अर्थात् परमेश्वर है।

अध्याय 15 के श्लोक 18

यस्मात्, क्षरम् अतीतः, अहम्, अक्षरात् अपि च उत्तम।
अतः अस्मि लोके वेदे च प्रथितः पुरुषोत्तमः।।

अनुवाद : (यस्मात्) क्योंकि (अहम्) मैं काल – ब्रह्म(क्षरम्) नाशवान् स्थूल शरीर धारी प्राणियों से (अतीतः) श्रेष्ठ (च) और (अक्षरात्) अविनाशी जीवात्मासे (अपि) भी (उत्तमः) उत्तम हूँ (च) और (अतः) इसलिये (लोके, वेद) लोक वेद में अर्थात् कहे सुने ज्ञान के आधार से (पुरुषोत्तमः) श्रेष्ठ भगवान अर्थात् कुल मालिक नामसे (प्रथितः) प्रसिद्ध (अस्मि) हूँ। परन्तु वास्तव में कुल मालिक तो अन्य ही है जिसका वर्णन श्लोक 17 में है।

शेष वाणी :- ताहि न यह जग जाने भाई। तीन देव में ध्यान लगाई।।
तीन देव की करहीं भक्ति। जिनकी कभी न होवे मुक्ति।।
तीन देव का अजब खयाला। देवी–देव प्रपंची काला।।
इनमें मत भटको अज्ञानी। काल झपट पकड़ेगा प्राणी।।
तीन देव पुरुष गम्य न पाई। जग के जीव सब फिरे भुलाई।।
जो कोई सतनाम गहे भाई। जा कहैं देख डरे जमराई।।
ऐसा सबसे कहीयो भाई। जग जीवों का भरम नशाई।।
कह कबीर हम सत कर भाखा, हम हैं मूल शेष डार, तना रू शाखा।।

साखी :-

रूप देख भरमो नहीं, कहैं कबीर विचार। अलख पुरुष हृदये लखे, सोई उतरि है पार।।

भावार्थ :- परमेश्वर कबीर साहेब जी अपने परम शिष्य धर्मदास जी से कहा कि ध्यानपूर्वक सुन वह पूर्ण ब्रह्म (परम अक्षर पुरुष) परमात्मा मैंने (कबीर साहेब ने) पाया(अपनी महिमा आप ही कहनी पड़ी क्योंकि सतपुरुष को कोई साधक नहीं जानता था। स्वयं कबीर साहेब ही भक्त तथा संत व परमात्मा की भूमिका निभा रहे हैं) उस परमात्मा (पूर्णब्रह्म) का सर्व ब्रह्मण्डों से पार स्थान है वहां पर वह आदि परमात्मा (सतपुरुष) रहता है। वही सर्व जीवों का दाता है (इसी का प्रमाण गीता जी के अध्याय 15 के श्लोक 17 में दिया है) जो उसी सतधाम में सबसे न्यारा रहता है (इसी का प्रमाण यजुर्वेद के अध्याय 5 के श्लोक 32 में भी है) उस परमात्मा(इसी का प्रमाण गीता जी के अध्याय 18 के श्लोक 46 व 61, 62,66 में, अध्याय 8 के श्लोक 1, 3, 8, 9, 10 तथा 17 से 22 व अध्याय 2 के श्लोक 17 में पूर्ण प्रमाण है) को कोई नहीं जानता तथा उसकी प्राप्ति की विधि भी किसी शास्त्र में वर्णित नहीं है। इसलिए सतनाम व सारनाम के स्मरण के बिना काल साधना(केवल ऊँ मन्त्र जाप) करके काल का ही आहार बन जाते हैं।

सच्चा साहेब(अविनाशी परमात्मा) भजो। उसकी साधना सतनाम व सारनाम से होती है। इसका ज्ञान न होने से ऋषि व संतजन लगन भी खूब लगाते हैं। हजारों वर्ष वेदों में वर्णित साधना भी करते हैं परंतु व्यर्थ रहती है। पूर्ण मुक्त नहीं हो पाते। धर्मदास जी को साहेब कबीर कह रहे हैं कि जो सज्जन व्यक्ति आत्म कल्याण चाहने वाले अपनी गलत साधना त्याग कर तत्वदष्टा सन्त के पास नाम लेने आएंगे। उनको सतनाम व सारनाम मन्त्र दिया जाता है। जिससे वे काल जाल से निकल कर सतलोक में चले जाएंगे। फिर जन्म-मरण रहित हो कर पूर्ण परमात्मा का आनन्द प्राप्त करेंगे। सही रास्ता (पूजा विधि) न मिलने के कारण नादान आत्मा पत्थर पूजने लग गई, व्रत, तीर्थ, मन्दिर, मस्जिद आदि में ईश्वर को तलाश रही हैं जो व्यर्थ है यह सब स्वार्थी अज्ञानियों व नकली गुरुओं द्वारा चलाई गई है। जो गुरु सतनाम व सारनाम नहीं देता वह सतपुरुष (कबीर साहेब) का दुश्मन है जो गलत साधना कर व करवा के स्वयं को भी तथा अनुयाईयों को भी नरक में ले जा रहा है। जो आप ही भूला है तथा नादान भोली-भाली आत्माओं को भी भुला रहा है।

वेदों व गीता जी में ऊँ नाम की महिमा बताई है कि यह भी मूल नाम नहीं है। सारनाम के बिना अधूरे नाम को अंश नाम कहा है जो पूर्ण मुक्ति का नहीं है। इसी के बारे में कहा है कि शाखा (ब्रह्मा-विष्णु-शिव व ब्रह्म-काल तथा माता की साधना को शाखा कहा है) व पत्र (देवी-देवताओं की पूजा का ईशारा किया है) में जगत उलझा हुआ है। जो इनकी साधना करता है वह नरक में जाता है। इसी का प्रमाण गीता जी के अध्याय 14 के श्लोक 5 में तथा अध्याय 9 के श्लोक 25 में है तथा पवित्र गीता अध्याय 7 श्लोक 12 से 15 तथा 20 से 23 तक है।

पूर्ण परमात्मा को संसार वक्ष का मूल कहा है कि उस परमात्मा तथा उसकी उपासना को कोई नहीं जानता। कबीर जी ने यह भी स्पष्ट किया है कि संसार का मूल मैं ही हूँ। अज्ञानतावश ब्रह्मा-विष्णु-शिव और श्री राम व श्री कष्ण जी को ही अविनाशी परमात्मा मानते हैं। ''जीव अभागे मूल नहीं जाने, डार-शाखा को पुरुष बखाने'' संसार के साधक वेद शास्त्रों को पढ़ते भी हैं परंतु समझ नहीं पाते। व्यर्थ में झगड़ा करते हैं। जबकि पवित्र वेद व गीता व पुराण भी यही कहते हैं कि अविनाशी परमात्मा कोई और ही है। प्रमाण के लिए गीता जी के अध्याय 15 के श्लोक 16-17 में पूर्ण वर्णन किया गया है। जो इन तीन देवों (ब्रह्मा, विष्णु, शिव) की भक्ति करते हैं उनकी मुक्ति कभी नहीं हो सकती। हे नादान प्राणियों! इनकी उपासना में मत भटको। पूर्ण परमात्मा की साधना करो। धर्मदास से साहेब कबीर कह रहे हैं कि यह सब जीवों को बताओ, उनका भ्रम मिटाओ तथा सतपुरुष की पूजा व महिमा का ज्ञान कराओ।

सतमार्ग दर्शन

चौपाई :

जो जो वस्तू दष्टि में आई, सोई सबहि काल धर खाई।।
मूरति पूजैं मुक्त न होई, नाहक जन्म अकारथ खोई।।

कबीर पंथी शब्दावली (पष्ठ नं. 541 से 544) से सहाभार

।। रमैनी ।।

रमैनी 21 - मैं तोहि पूंछो पडित ज्ञानी। पथ्वी आकाश रहे नहिं पानी।।
सूक्ष्म स्थूल रहे नहिं कोई। बिराट सहित परले सब होई।।

तबहिं बिराट काहि अधारा। तब वेद जाप जर होवे छारा।।
होय अलोप जब रवि औ चन्दा। तब कापर रहे बाल मुकुन्दा।।
यह अचरज मोहिं निसि दिन भाई। दुरमत मेट मोहिं देहु बताई।।

इस रमैणी नं. 21 में साहेब कबीर कह रहे हैं कि हे वेदों व शास्त्रों के ज्ञाता (पंडित) मुझे बताओ कि जब महाप्रलय परब्रह्म द्वारा की जाएगी उसमें सूक्ष्म-स्थूल आदि शरीर समाप्त हो जाएंगे तथा यह ब्रह्म काल (विराट रूप) भी नहीं रहेगा। इसलिए आप पूर्ण परमात्मा का मार्ग प्राप्त करो। यह सही मार्ग सब भूल गए हैं जिसके कारण पूर्ण शांति नहीं।

।। रमैनी।।

रमैनी 23 – वेद कतेब झूठे ना भाई। झूठे हैं जो समझे नाहीं।।
नरकी नारी जो मर जाई। के जन्मे के स्वर्ग–नरक समाई।।
पिंडा तरपन जब तुम कीन्हा। कहो पंडित उन कैसे लीना।।
कुंभक भरभर जल ढरकावे। जिवत न मिले मरे का पावे।।
जलसे जल ले जलमें दीन्हा। पित्रन जल पिंडा कब लीन्हा।।
वनखंड मांझ परा सब कोई। मनकी भटक तजे न सोई।।
आपनके छुंवन करे बिचारा। करता न लखा परा भर्म जारा।।
परमपरा जैसी चलि आई। तामें सभन रहा बिलमाई।।

इस रमैणी नं. 23 में साहेब कबीर कह रहे हैं कि वेद (चारों वेद व गीता आदि) तथा कतेब (चार धार्मिक पुस्तक मुसलमान धर्म की तथा बाईबल आदि) झूठे नहीं है। जिन्होंने पूर्ण ज्ञान नहीं हुआ। वे झूठे है सर्व समाज को अधूरा मार्ग दे दिया। मानो किसी की पत्नी मर जाती है। वह मरने के बाद या तो दूसरा जन्म ले लेती है या नरक या स्वर्ग चली जाती है या प्रेत बन जाती है। फिर तुमने जो पिण्ड तर्पण किया उस बेचारी ने कैसे आ कर लिया? अब लोटा भर-भर कर डाल रहे हो। यदि कोई व्यक्ति अपने घर पर है उसके निमित जल डालो फिर देखों उसे मिला या नहीं। जब जीवित को नहीं मिला तो मरे हुए को कैसे प्राप्त हो सकता है? अपने हाथों शरीर जलाकर बनखण्ड में श्मशान में डाल आए। फिर उसे पिण्ड दान करते हो। जीवित की सेवा करनी चाहिए मरने के बाद क्या लाभ?

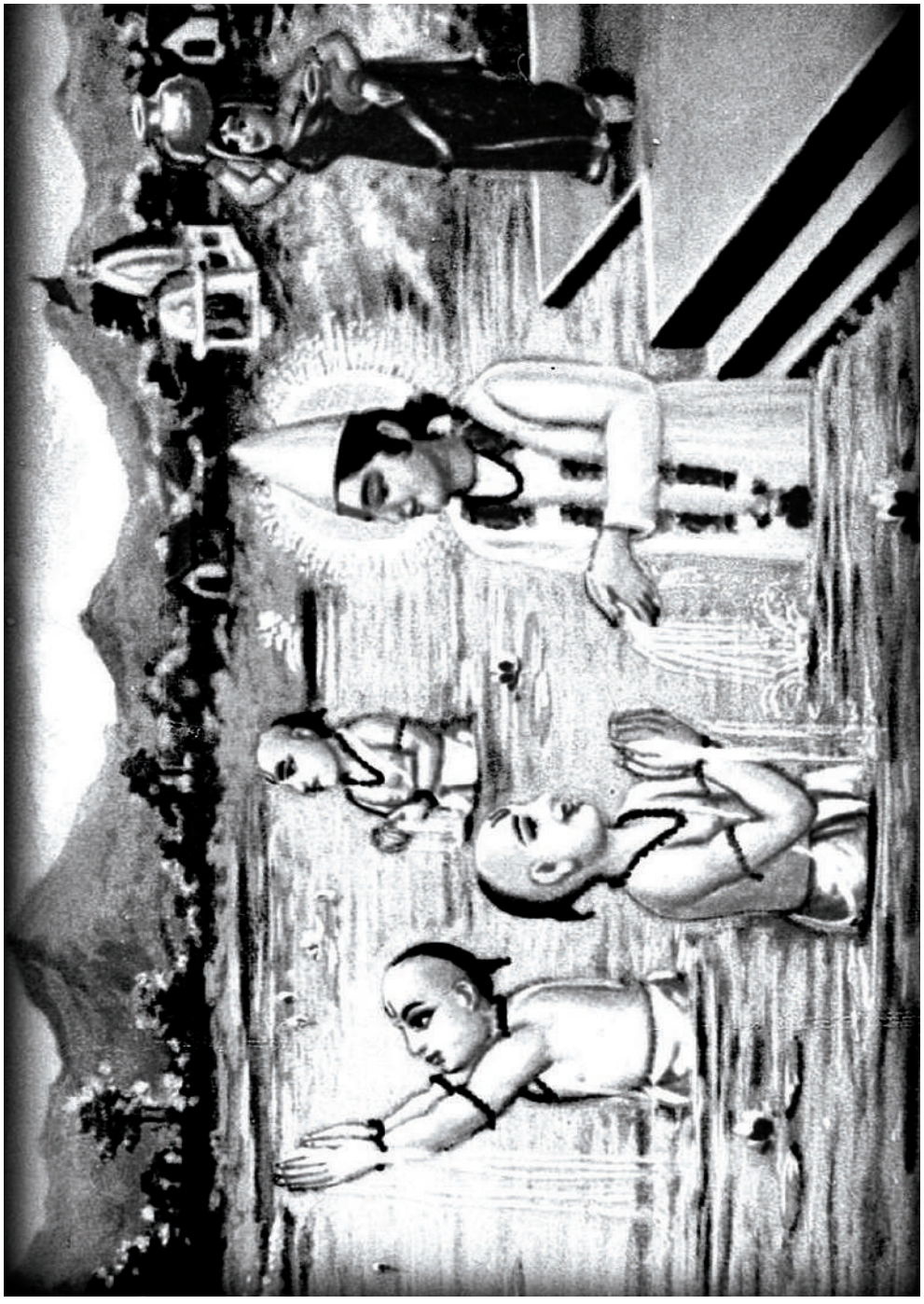

कबीर साहेब द्वारा अंध विश्वास का निवार्ण करना

।। पितरों को जल देना व्यर्थ।।

एक समय साहेब कबीर जी काशी में गंगा दरिया के किनारे पर गए तो देखा बहुत से व्यक्ति गंगा जल का लोटा भर कर सूर्य की तरफ मुख करके वापिस ही जल में डाल रहे हैं, कुछ बाहर पटरी पर डाल रहे हैं। इस अज्ञानता को हटाने के लिए कबीर साहेब दोनों हाथों से गंगा जल बाहर फेंकने लगे। यह देखकर उन शास्त्रविरूद्ध साधकों ने साहेब कबीर से पूछा यह क्या कर रहे हो? कबीर साहेब जी ने पूछा आप क्या कह रहे हो? उन नादानों ने उत्तर दिया कि हम अपने पितरों को स्वर्ग में जल भेज रहे हैं। कबीर साहेब जी ने कहा कि मैंने अपनी झौंपड़ी के पास बगीचा लगाया है। उसकी सिंचाई कर रहा हूँ। यह सुन कर वे भोले व्यक्ति हँसते हुए बोले रे मूर्ख कबीर! यह जल आधा कोस (1.5 कि.मी.) कैसे जाएगा? यह तो यहीं पर जमीन सोख रही है। साहेब कबीर जी ने उत्तर दिया कि यदि आपका जल करोड़ों-अरबों कोस दूर पितर लोक में आपके पितरों को प्राप्त हो सकता है तो मेरा बगीचा तो अवश्य पानी से भरा मिलेगा तथा कहा कि हे नादानों! आप कह रहे हो कि स्वर्ग में पानी भेज रहे हैं। क्या स्वर्ग में जल नहीं है? फिर स्वर्ग कहाँ वह तो नरक कहो। इस सारी लीला का तात्पर्य समझ कर उन मार्ग से विचलित साधकों ने साहेब कबीर जी का उपदेश लिया तथा अपना कल्याण करवाया।

विशेष :- अध्याय 3 का श्लोक 36 में अर्जुन पूछता है कि न चाहते हुए भी मनुष्य पाप कर्म कर देता है। जैसे कोई बलपूर्वक (जबरदस्ती) करवा रहा हो, कप्या इसका कारण बताईए?

विशेष विवरण :-अध्याय 3 का श्लोक 37 से 43 तक का उत्तर है कि काम (सैक्स) जीव की बुद्धि पर छा जाता है, जिस कारण से ज्ञान समाप्त हो जाता है। इसलिए बुद्धि द्वारा मन को वश कर काम (सैक्स) को मार। विचार करें कि :-

।।भगवान शंकर के भी मन व काम (सैक्स) वश नहीं हुआ।।

एक समय भगवान रामचन्द्र पुत्र श्री दशरथ अयोध्या वासी को उनकी मौसी केकई से वचनबद्ध होकर राजा दशरथ ने बनवास देना पड़ा। रामचन्द्र के वियोग में अपने प्राण भी त्याग दिए। भगवान रामचन्द्र जी सीता जी व छोटे भाई (मौसी के पुत्र) लक्ष्मण जी के साथ वन में पंचवटी नामक स्थान पर एक कुटिया बना कर रह रहे थे।

एक दिन लंका के राजा रावण ने साधु के भेष में आकर सीता जी का हरण कर लिया। सीता की तलाश में श्री रामचन्द्र जी बावलों की तरह कभी रो रहे थे, कभी जंगली पेड़-पौधों व पशु-पक्षियों से पूछ रहे थे कि तुमने मेरी सीता देखी! विलाप कर रहे थे। आकाश से भगवान शिव व महादेवी जी यह सब देख रहे थे। देखते-देखते भगवान शिवजी ने प्रणाम किया तथा देवी के पूछने पर कि आप किसे प्रणाम कर रहे हैं भगवान शिव ने कहा यह परब्रह्म प्रभु है। (तीन लोक के उपासक तो ज्योति निरंजन को ही परब्रह्म मानते हैं क्योंकि उस समय वह काल भगवान ही श्री रामचन्द्र में प्रवेश करके तड़फा रहा था। यही मन है जो मोह को पैदा करके श्री रामचन्द्र भगवान की बुद्धि को खो कर आम जीव की तरह रूला रहा था) प्रभु शिव जी ने कहा आपकी महिमा कोई नहीं जान सका। चूंकि भगवान शिव को श्री रामचन्द्र जी के शरीर में प्रवेश ज्योति निरंजन की परम तेजोमय शक्ति का आभास हो रहा था, उमा को नहीं। उसे केवल रामचन्द्र पुत्र राजा दशरथ ही नजर आ रहा था।

क्योंकि यह सर्व काल (ज्योति निरंजन) के वश है। वह जिसकी बुद्धि जब चाहे कम कर देता है और जिसकी चाहे विकसित कर देता है। उस समय उमा की बुद्धि तो क्षीण कर दी और श्री शिव जी की बुद्धि विकसित कर दी। जिसके परिणामस्वरूप गौरी ने प्रणाम नहीं किया। फिर भगवान शिव से कहने लगी कि यह तो राजा दशरथ का पुत्र श्री रामचन्द्र है। इसको आप भगवान कह रहे हो। भगवान शिव बोले उमा (पार्वती) आप नहीं जानती। यह विष्णु भगवान के अवतार ही रामचन्द्र जी हैं। इनकी पत्नी को कोई उठा ले गया है। इसलिए ये विलाप व तलाश कर रहे हैं।

उमा (गौरी) बोली भगवान कभी रोते हैं क्या? मैं तो इनकी परीक्षा लूंगी। तब इसको प्रणाम करूँ। भगवान शिव बोले कि परीक्षा मत लेना। उमा ने उपरले मन से कहा कि अच्छा परीक्षा नहीं लूंगी। परंतु शिव जी के दूर जाते ही छिपकर सीता जी का रूप बनाकर यह सोचकर कि मुझे सीता जानकर प्यार व संतोष करेगा, श्री रामचन्द्र जी के सामने आई। बात इसके विपरीत हुई। श्री रामचन्द्र जी बोले - हे दक्ष की पुत्री! आप भगवान शिव को कहाँ छोड़ आई?[क्योंकि यहां काल (महाविष्णु) ने श्री राम (विष्णु) की बुद्धि को खोल दिया तथा उसे देवी का असली रूप दर्शा दिया]

यह जानकर देवी बहुत शर्मिन्दा हुई तथा कहा कि भगवान शिव तो ठीक ही प्रणाम कर रहे थे। आप तो सचमुच भगवान हो। फिर अपने घर कैलाश पर्वत पर आ गई। उधर से काल (मन) ने शिवजी को उकसाया तथा पूछ बैठा कि ले आई परीक्षा। सती जी ने झूठ बोलते हुए कहा कि नहीं, मैंने कोई परीक्षा नहीं ली। परंतु शिव अन्दर ही अन्दर दक्ष पुत्री देवी से नाराज हो जाते हैं तथा कहते हैं कि आपने सीता माता {क्योंकि बड़ी भाभी (बड़े भाई की पत्नी) माँ समान आदरणीय होती है तथा छोटे भाई की पत्नी बहन समान या बेटी समान होती है। ये तीन भाई हैं। बड़ा ब्रह्मा, मंझला विष्णु और सबसे छोटा शिव (शंकर)है} का रूप बनाया है। इसलिए मैं आपको पत्नी रूप में स्वीकार नहीं कर सकता तथा पति-पत्नी का व्यवहार बन्द कर दिया। उमा को मालूम था कि भोले नाथ अपनी बात के पक्के हैं। पथ्वी दिशा बदल सकती है परंतु शिव अपनी जिद्द को नहीं छोड़ सकते। अकेलापन तथा हर समय अपनी भूल के पश्चाताप से तंग आकर उमा ने सोचा कि क्यों न अपने पिता के पास चलें। बच्चा कितनी ही गलती क्यों न कर दे आखिरकार माता-पिता क्षमा कर ही देते हैं। [क्योंकि राजा दक्ष के मना करने पर भी उमा ने शिव से शादी की थी। जिससे राजा दक्ष ने कहा था कि आज के बाद मेरे घर नहीं आएगी और न ही इस शिव जी को लाएगी। इसलिए उमा पहले कभी अपने पिता के घर नहीं गई थी।]

यह सोच कर उमा अपने पिता राजा दक्ष के घर पर चली गई। वहां देखा कि यज्ञ का अनुष्ठान राजा दक्ष के द्वारा किया जा रहा है। सारे यज्ञ मण्डप में घूम कर देखा तो पाया कि जो मेहमान आए हैं उनको उचित आदर से आसन दे रखा है, जो नहीं आए हैं उनका आसन लगा है तथा उनका हिस्सा भी निकाल कर आसन के पास रखा है। परंतु भगवान शिव (जो राजा दक्ष के दामाद थे) का न तो कहीं आसन है और न ही हिस्सा। यह सब देखकर अपनी माता के पास जा कर नाराजगी व्यक्त करती हुई बोली - आपने अपने दामाद शिव का न तो हिस्सा रखा है और न ही आदर से आसन दे रखा है। (लड़की की पार माता पर ही बसाती है। क्योंकि मां बेटी से विशेष प्यार करती है)। यह सुनकर माता ने कहा कि मेरी बात न तो तू मानती है। मैंने तेरे से कहा था कि बेटी मात-पिता का वचन मानने में ही भलाई है। आपने अपनी इच्छा से शादी करवाई। अब न तेरे पिता जी मेरी बात मानते हैं। सौ बार कहा है कि बेटी को बुला लो लेकिन नहीं मानें। अब तू जाने तथा तेरे पिता जी जाने।

माता के मुख से यह वचन सुन कर उमा अपने पिता राजा दक्ष के पास गई और कहा कि आपने न तो अपने दामाद शिव को बुलाया और न ही हिस्सा (भाग) निकाला। यह सुनकर राजा दक्ष नाराजगी व्यक्त करते हुए बोला कि तेरे को यहां किसने बुलाया है? किस लिए आई हो?

इस बात का दुःख मानकर देवी उमा ने यज्ञ के हवन कुण्ड में छलांग लगा कर आत्महत्या कर ली। इस बात का पता शिव को लगा तो शिवजी ने अपनी जटा से एक बाल उखाड़ कर जमीं पर दे मारा। उससे एक लम्बे चौड़े विकराल रूप का व्यक्ति सामने खड़ा हो गया। उसका नाम वीरभद्र (कालभद्र) कहा तथा शिव ने आदेश दिया कि सर्व भूत व गण सेना ले जा कर राजा दक्ष का सिर काट दो। उस समय राजा दक्ष की यज्ञ में ब्रह्मा-विष्णु भी राजा की विशेष प्रार्थना पर आए हुए थे। क्योंकि राजा दक्ष को भय था कि कहीं शिव को यज्ञ में आमन्त्रित न करने के कारण नाराज होकर यज्ञ को भंग न कर दे। शिव से अपनी व यज्ञ की रक्षा के लिए ब्रह्माजी व विष्णु जी बुला रखे थे।

जब उन दोनों (ब्रह्मा-विष्णु) को यह मालूम हुआ कि वीरभद्र पूरी सेना लेकर आ रहा है, जिसकी शक्ति हमसे ज्यादा है, जान का खतरा है। दोनों खिसकने की तैयारी करने लगे। इससे पहले ही अन्य राजा लोग वीरभद्र के भय से खिसक चुके थे। तब राजा दक्ष ने अपनी रक्षा की भीख मांगते हुए ब्रह्मा जी व विष्णु जी को याद दिलाया कि आप कह रहे थे कि हमारे रहते आपको कोई भय नहीं है। अब आप भी जा रहे हो। मेरी सुरक्षा आपके अतिरिक्त कौन कर सकता है? ब्रह्मा तो राजा दक्ष की बात को अनसुना करके चला गया परंतु भगवान विष्णु रूक गया। वीरभद्र आया, विष्णु से युद्ध हुआ। विष्णु को वीरभद्र ने ऐसा तीर मारा कि विष्णु स्तब्ध रह गया अर्थात् खम्भे की भांति खड़ा रहा। हिलना-डुलना भी बंद हो गया। उस समय उपस्थित वेद मन्त्र पढ़ रहे ब्राह्मणों ने वेद मन्त्र बोल कर विष्णु जी की स्तब्धता समाप्त की तथा विष्णु जी युद्ध छोड़ कर भाग गया।

फिर वीरभद्र ने शिव की आज्ञानुसार राजा दक्ष का सिर काट डाला। तत्पश्चात् शिवजी उमा के शव को लेने के लिए राजा दक्ष के यहाँ पहुँचे तो सर्व उपस्थित महर्षियों की प्रार्थना पर राजा दक्ष को बकरे का शीश लगा कर जीवित किया। फिर उमा के शव को देखा जो केवल अस्थि-पिंजर रूप में बकाया पड़ा था। उस अस्थि-पिंजर को कंधे पर रख कर मोहवश अंधा होकर उसे उमा जानकर दस हजार वर्षों तक पागलों की तरह लिए घूमता रहा व उमा समझकर उन्हीं हड्डियों को प्यार करता रहा। मुख को चूमता रहा। एक दिन नारद जी के कहने पर भगवान विष्णु ने सुदर्शन चक्र से देवी के कंकाल (हड्डियों) के टुकड़े-2 कर डाले। (जहां आँखें गिरी वहां नैना देवी के नाम से मन्दिर बनाया है, जहाँ धड़ गिरा वहां वैष्णों देवी मन्दिर की स्थापना बाद में की जा चुकी है तथा जहाँ जिह्वा गिरी वहाँ ज्वाला देवी मन्दिर बाद में बनाया गया।) ये मन्दिर एक यादगार बनाई थी कि घटना का प्रमाण बना रहे। बाद में पूजाऐं शुरु हो गई। तब कुछ समय रो कर शिव के मोह का नशा उतरा। तब सर्व हालातों को जानकर भगवान शंकर जी ने यह निर्णय लिया कि मुझे कामदेव (सैक्स) ने सताया तो शादी की इच्छा हुई। दक्ष पुत्री से विवाह हुआ। फिर उमा पर पूरा विश्वास किया कि यह मेरी प्राण प्यारी है, मुझे स्वप्न में भी धोखा नहीं दे सकती। इसने भी मुझे धोखा दिया, झूठ बोला कि मैंने श्री राम की परीक्षा नहीं ली। अब संसार में ऐसा कौन है जिस पर विश्वास किया जाए? यह विचार कर शिव ने फैसला किया कि ''न रहेगा बांस, न बजेगी बांसुरी''। मैं अपने कामदेव (सैक्स) को ही समाप्त कर देता हूँ जो मेरा सबसे बड़ा दुश्मन बना है। लोक वेद के आधार पर शास्त्र विधि त्याग कर मनमाना आचरण अर्थात् हठ करके इन्द्रियों व मन को वश करने के लिए शिवजी ने अठासी हजार वर्ष तक घोर तप व ऊँ मन्त्र का जाप करके

यह मान लिया कि अब मन मार लिया है तथा काम (सैक्स) व इन्द्रियों को काबू कर लिया है।

काल भगवान (महाविष्णु-ज्योति निरंजन) ने सोचा यदि संसार के प्राणी ऐसी साधना करने लग गए तो मेरी क्षुधा कैसे मिटेगी? यह तो काल को मालूम है कि ये साधनाएँ जो वेदों में, गीता जी आदि शास्त्रों में मन मारने की वर्णित हैं। इनसे मन काबू नहीं आ सकता। फिर भी यदि शिव की देखा-देखी सब साधना करने लग जाएंगे व हजारों वर्ष समाधी में बैठे रहेगें। मेरे खाने के लिए संतान उत्पत्ति नहीं कर पाएगें। यह सोच कर क्यों न बुराई को आरम्भ में काट डालूं। (Nip the evil in the bud)

फिर कोई मन व कामदेव (सैक्स) को मारने की कोशिश ही नहीं करेगा। सोचेगा कि जब शिव जैसे साधक ही असफल हैं तो मेरे जैसा साधारण व्यक्ति कैसे सफल हो सकता है? भगवान शिव के मन में काल (ज्योति निरंजन) ने प्रेरणा दी कि आज भगवान विष्णु से यह जानना चाहिए कि आपने 'समुद्र मन्थन' के समय राक्षसों से अमत का कलश लेने के लिए स्त्री का रूप बनाया था। वह मुझे दिखाओ। क्योंकि मैं विष (जो समुन्द्र मन्थन में निकला था जिससे शिव ने अपने कण्ठ में ठहराया था। जिससे उन्हें नीलकंठ के नाम से भी जाना जाने लगा) के प्रभाव के कारण नहीं देख पाया था। यह विचार करके भगवान विष्णु के पास जा कर कहा कि कप्या वही मोहिनी रूप मुझे फिर से दिखाईए। मेरी प्रबल इच्छा है। भगवान विष्णु ने कहा कि छोड़ो भोले नाथ जी, गड़े मूर्दे नहीं उखाड़ा करते अर्थात् बीती बातों को नहीं दोहराया करते। समय न जाने क्या करवा देता है। उस समय मजबूरी थी। यदि मैं मोहिनी (स्त्री जिसका रूप मन को मोह ले) रूप बना कर राक्षसों में नहीं जाता तो वे अमत पी कर लम्बी आयु वाले हो जाते तथा भक्तों व ऋषियों को दुःखी करते रहते। मैंने उन्हें शराब का कलश दे दिया जिसे पी कर मदहोश हो गए तथा अमत का घड़ा छीन कर देवताओं को दे दिया। वे सब राक्षस मुझे स्त्री रूप में देखकर मोहित हो गए तभी मैंने अवसर पा कर कलश बदल दिए थे। भगवान शिव ने कहा कि मैं आपका वही स्त्री रूप देखना चाहता हूँ। आप बहुत ही अच्छे लग रहे होंगे। जब तक आप मेरी इच्छा पूर्ण नहीं करोगे मैं आपके द्वार पर ही बैठ कर प्रार्थना करता रहूँगा। विष्णु जी ने सोचा यह तो 88 हजार वर्ष तक बैठने वाला साधक यदि यहां पर बैठ गया तो उठने का नाम नहीं लेगा। यह विचार कर भगवान विष्णु अन्तर्ध्यान हो गए। कुछ दूरी पर एक सुन्दर युवा स्त्री के रूप में अर्ध नग्न शरीर युक्त पोशाक पहने हुए दिखाई दिए। शिवजी इतने काम प्रेरित हो गए कि उस लड़की के पीछे-2 भाग लिए। जब लड़की का हाथ पकड़ा उस समय तक शिवजी का वीर्य पात हो चुका था। भगवान विष्णु अपने रूप में प्रकट हो गए। उस समय शिव के हाथ में भगवान विष्णु का हाथ था तथा विष्णु जी कह रहे थे कि मैंने राक्षसों को ऐसे मूर्ख बनाया जिससे आप जैसे त्रिकाल दर्शी योगी भी चक्र में पड़ गए। मन व काम (सैक्स) को शिव जैसे भगवान व साधक भी नहीं वश कर पाए तो साधारण जीव व साधक कैसे सफल हो सकता है। इस महान शत्रु को तो केवल शास्त्र विधि अनुसार भक्ति साधना तत्वदर्शी संत से प्राप्त करके ही पराजित किया जा सकता है। गरीबदास जी महाराज जो कबीर साहिब जी के शिष्य थे अपनी वाणी में कह रहे हैं :-

गरीब, जैसे अग्नि काष्ट के मांही, है व्यापक पर दिखे नाहीं। ऐसे काम देव प्रचण्डा, व्यापक सकल द्वीप नौ खण्डा।।

जैसे लकड़ी में अग्नि होती है परंतु वह दिखाई नहीं देती। ऐसे ही काम (सैक्स) हर प्राणी में विद्यमान रहता है। जब भी कोई स्त्री-पुरुष का सानिध्य होता है तो काम (सैक्स) रूपी अग्नि प्रज्वलित हो जाती है। जैसे काष्ठ को आग लगा दी जाए तो न दिखाई देने वाली अग्नि दिखाई देने

लगती है। कबीर साहेब जी कहते हैं :-

कबीर सत्यनाम सुमरण बिन, मिटे न मन का दाग। विकार मरे मत जानियो, ज्यों भूभल में आग।।

जो भी साधक जैसी साधना कर रहा है वही उसके पूरी होने पर समझ बैठता है कि मैंने मन-इन्द्रियाँ जीत ली हैं। यही भ्रम एक बार परम ऋषि नारद जी को भी हुआ था। आदरणीय गरीबदास जी कबीर पंथी संत, छुड़ानी (हरियाणा) वाले की अमृतवाणी -

गरीब, कुरंग, मतंग, पतंग, श्रंग और भ्रंगा। इन्द्री एक ठग्यो तिस अंगा।।

गरीब, तुम्हरे संग पांचों प्रकासा। योग युक्त की झूठी आशा।।

कुरंग कहते हैं हिरण को। हिरण में शब्द का रस लेने वाली श्रवण इन्द्री प्रबल होती है जिसके वश होकर शिकारी (जो एक विशेष धुन बनाकर शारंगी से शब्द गुंजार करता है)के पास अपने आप शब्द के आनन्द वश होकर अपने प्राणोंकी परवाह न करके चला जाता है जिस कारण मारा जाता है।

मतंग कहते हैं हाथी को। इसमें काम वासना (Sex) की अधिकता होती है जो उपस्थ इन्द्री के वश होकर अपनी जान शिकारी के हाथों सौंप देता है।

हाथी पकड़ने वाले शिकारी एक हथिनी को विशेष शिक्षा देकर रखते हैं। जंगल में जाकर एक गहरा गड्डा खोद कर उस पर लम्बे बांसों से छत दे देते हैं। उसके ऊपर मिट्टी डाल कर घास जमा देते हैं जिससे देखने में जमीन प्रतीत होती है। फिर उस शिक्षित हथिनी को हाथियों के झुण्ड की ओर भेज देते हैं। हथिनी किसी एक हाथी से अपना शरीर स्पर्श करके उसे काम (सैक्स) प्रेरित करती है। जब वह कामुक हाथी कोशिश करता है तब वह हथिनी भाग लेती है। पीछे-2 हाथी भागता है। वह हथिनी वहीं पर जहां गड्डा खोदा हुआ होता है के समीप आकर स्वयं बराबर से निकल कर फिर सीधा भाग लेती है। हाथी कामवश अंधा होकर सीधा ही भागता रहता है तथा उस सुनियोजित विधि से बनाए गड्डे में गिर कर कहीं निकलने का रास्ता न पा कर चिंघाड़ें मार-2 कर निर्बल हो जाता है तथा शिकारी पकड़ लेता है । फिर सारी उम्र परवश होकर भूखा प्यासा गाँव-2 में मांगने वाले के साथ भ्रमता रहता है।

रूप (नेत्र इन्द्री) के वश होकर एक पतंगा दीपक के रूप (रोशनी) पर आसक्त होकर जल मरता है। रस (जिह्वा इन्द्री) के वश होकर मच्छली एक छोटे से मांस के टुकड़े को खाने की कोशिश करती है जो शिकारी ने एक लोहे की तीखी नोक वाले आगे से मुड़े हुए तार (कांटे) में उलझा रखा होता है। वह कांटा उसके मुख में फंस जाता है। फिर मच्छिहारा झटका मार कर उसे पानी से बाहर पटक देता है। वह मच्छली तड़फ-2 कर मर जाती है। गंध (नाक इन्द्री) के वश होकर भंवरा किसी फूल पर बैठ जाता है तथा इतना विवश हो जाता है कि वह फूल शाम को बन्द हो जाता है भंवरा अपने प्राण त्याग देता है। तुम्हारे संग पाँचों प्रकासा। योग युक्त की झूठी आशा।।''

संत गरीबदास जी ने कहा है कि मनुष्य के साथ उपरोक्त पाँचों ज्ञान इन्द्रीयाँ अपना प्रभाव जमाए हैं तो योग युक्त अर्थात् साधना में लीन होने की व्यर्थ आशा है। जैसे गीता अध्याय 3 श्लोक 4 से 6 में कहा है कि जो पाखण्डी साधक एक स्थान पर बैठ कर हठपूर्वक कर्म इन्द्रीयों को रोकर साधनारत दिखाई देता है वह दम्भ (पाखण्ड) कर रहा होता है क्योंकि उस की ज्ञान इन्द्रियाँ निश्चल नहीं रहती। इसलिए वह योग युक्त नहीं हो सकता।

2. नारद जी से मन वश नहीं हुआ :- नारद जी को मनमानी साधना करके अभिमान हो गया था कि मैंने मन वश कर लिया। जब परीक्षा हुई तो विवाह के लिए तड़फ गए और बन्दर का

मुख लगवाकर झुलूस निकलवाया।

3. स्वयं कष्ण (विष्णु) जी के मन व काम (सैक्स) वश नहीं हुआ।

सर्व विदित है कि भगवान कष्ण जी ने मन व काम (सैक्स) के वश होकर हजारों गोपियों व राधा जी, कुब्जा से तथा आठ विवाहित पत्नियों से काम (सैक्स) क्रीड़ा की। एक बार एक राक्षस देवताओं से मारा नहीं जा रहा था। एक ऋषि ने बताया कि इसकी पत्नी पतिव्रता है। इसलिए यह नहीं मर रहा है। उसका पतिव्रत धर्म भंग किया जाए तब यह मरे। इसके लिए सर्व देवताओं ने भगवान विष्णु के पास जा कर प्रार्थना की तब विष्णु जी बोले- आपकी प्रार्थना स्वीकार हुई। भगवान विष्णु ने उस राक्षस का रूप बनाया तथा धोखा करके राक्षस की पत्नी के साथ काम (सैक्स) क्रीड़ा की। तब वह राक्षस मारा गया।

तो क्या अर्जुन मन को वश कर सकता है या आम जीव कर सकता है? यह सर्व काल जाल है। जो जीव से न चाहते हुए भी पाप करवा देता है। मन स्वयं काल ब्रह्म है। काल परमेश्वर कबीर जी से भय मानता है। गरीबदास जी ने बताया है कि :-

काल डरै करतार से, जय जय जय जगदीश। जौरा जोड़े झाड़ता, पग रज डारे शीश।।1

काल जो पीसै पीसना, जौरा है पनिहार। ये दो असल मजूर हैं, सतगुरू के दरबार।।2

भावार्थ :- वाणी नं. 1 :- काल ब्रह्म केवल कबीर करतार से डरता है। परमात्मा की जय जयकार करता है और जौर यानि मत्यु भी कबीर परमात्मा के आधीन है। वह भी कबीर जी के जोड़े यानि जूते झाड़ती यानि साफ करती है अर्थात् मत्यु भी परमात्मा कबीर जी की नौकर है। नौकर मालिक के आदेश का पालन करता है यानि कबीर जी के भक्त की मत्यु संस्कारवश नहीं हो सकती। परमात्मा कबीर जी की आज्ञा से उचित समय पर होगी।

वाणी नं. 2 का भी यही भावार्थ है कि सतगुरू कबीर जी के सामने काल ब्रह्म ऐसा है जैसे बहुत बड़े धनी का नौकर होता है। जैसे पूर्व समय में हाथ से चक्की चलाकर आटा बनाया जाता था। नौकर कणक को चक्की में पीसता था। आटे के लिए तैयार की गई कणक (गेहूँ-बाजरा) की पीसना कहते हैं। काल तो कबीर जी का पीसना पीसता है। मौत पानी भरने वाली पनिहार जैसी नौकरानी है। परमेश्वर कबीर जी के दरबार यानि कार्यालय में ये दोनों असली मजदूर हैं अर्थात् ये परमात्मा कबीर जी के सामर्थ्य के सामने इतने कम हैं। इसलिए कबीर जी द्वारा बताई यथार्थ साधना से मन (काल) वश होता है।

इसलिए परम पूज्य परमेश्वर कबीर (कविर्देव) जी यह कहना चाहते हैं कि मानव आपको काल ने इन पाँचों विकारों से प्रभावित कर रखा है। आप योग युक्त अर्थात् एक स्थान पर बैठकर हठ योग करके साधना की निष्फल कोशिश भला क्यों करते हो? कर्म करते-करते साधना करो जैसे गीता अध्याय 8 श्लोक 7 में कहा है कि अर्जुन तू मेरा भजन भी कर तथा युद्ध भी कर। युद्ध से अधिक किसी भी कार्य में जीव व्यस्त नहीं होता। इसलिए गीता ज्ञान से सिद्ध है कि हठ योग करना व्यर्थ है। संसारिक कर्त्तव्य कर्म करते हुए। पूर्ण सतगुरु से सत्यनाम ले कर भजन करो तथा काल-जाल से मुक्त हो जाओ। पूर्ण परमात्मा की साधना से मन वश होता है। इसी सत्यनाम से विकार समाप्त हो जाते हैं, मन वश होता है तथा सार शब्द से पूर्ण परमात्मा की प्राप्ति हो जाती है। जन्म-मरण से पूर्ण छुटकारा मिल जाता है।

❑❑❑